

# योगी गुरु जी के प्रश्नोत्तर — भाग 18

सत्संग से 200 प्रश्नोत्तर

आध्यात्मिक प्रत्यक्ष ज्ञान मार्ग

[adhyatmikpratyakshgyan.com](http://adhyatmikpratyakshgyan.com)

**प्रश्न: गुरु जी, हमने सात्विकता, सदाचार और संस्कृति कभी नहीं छोड़ी — शायद इसी कारण हमें आपकी ओर खिंचाव हुआ, जैसे चुंबक लोहे को खींचता है। ऐसा क्यों होता है? (P18-0001)**

प्रकृति कल्पवृक्ष की तरह है — जो आपको चाहिए, जिस लायक आप हैं और जैसा भाव बनाते हैं, वह धीरे-धीरे आपकी ओर खिंचने लगता है, और जैसे ही आप उपयोग करने लायक होते हैं, आपको मिल जाता है। जैसा जीवन आप जीते हैं, वैसे ही लोग आपको मिलने लगते हैं। तीन तरह का जीवन है — सात्विक, राजसी, तामसी। आप चाहे सात्विक काम करें, राजसी करें या तामसी, खोजने की जरूरत नहीं — वैसे ही लोग आपकी ओर आकर्षित होंगे, पास आएंगे और सहयोग भी करने लगेंगे। मैंने 12 साल से ऊपर भ्रमण में देखा कि लोगों ने व्यवस्थाओं को ही लक्ष्य बना लिया — घर, गाड़ी को लक्ष्य बना लिया, जबकि ये उपयोग करने के लिए मिले थे। यह शरीर भी उपयोग के लिए मिला है; यह साधन है उस साध्य तक पहुंचने का। आज सब कुछ होता जा रहा है, लेकिन मैं अपने आप से वंचित हूं।

**प्रश्न: गुरु जी, आज लोग खुलकर कहते हैं कि बेईमानी के बिना चलेगा ही नहीं — बच्चों को अच्छी शिक्षा देनी है तो बेईमानी करनी पड़ेगी। क्या सच में जीवन जीने के लिए बेईमानी जरूरी है? (P18-0002)**

आज स्वतंत्रता दिवस है — हम बाहर के लोगों से तो आजाद हो गए, पर क्या सच में आजाद हैं? पहले हम बाहर से जकड़े हुए थे, अब अंदर से अपने आप को बेईमानी की इतनी कठोर जंजीर में बांध रहे हैं और कहते हैं बेईमानी बिना चलेगा ही नहीं। एक अच्छा कमाने वाले ने कहा, बेईमानी नहीं करेंगे तो बच्चों को शिक्षा कैसे देंगे — पर उस पैसे में ही गुण-अवगुण आ गया। उस पैसे से शिक्षा तो होगी, पर संस्कार नहीं रहेगा; वह जरूर बुराई की तरफ ही ले जाएगा। मुझे तो जरा सा भी नहीं लगता कि जीवन जीने के लिए बेईमानी की जरूरत है। इसीलिए आज व्यवस्थाएं बहुत हो गईं और जीवन अशांत हो गया — हम शरीर से पास हैं पर मन से एक-दूसरे से बहुत दूर हो गए।

**प्रश्न: गुरु जी, आज मां-बाप को बच्चों से डरकर बात करनी पड़ती है और वृद्धाश्रम बढ़ते जा रहे हैं — इसका कारण क्या है? (P18-0003)**

20-30 साल पहले बेटा मां-बाप के सामने अदब से, डरकर बात करता था; आज मां-बाप को डरना पड़ता है कि बेटा कुछ जवाब न दे दे। मेरी समझ से जरूर हमने बेटे-बेटी को बेईमानी का धन ही खिलाया है। आज मां-बाप की इज्जत इसलिए नहीं हो रही — इसमें पूरा दोष बच्चों का नहीं है, क्योंकि आपने उनका पोषण ही ऐसा किया है। "जैसा खाओगे अन्न, वैसा होगा मन" — बचपन से सुनते आ रहे हैं, पर आचरण में नहीं उतार रहे। जैसे घर में बहुत अनाज रख दें पर खाएं नहीं तो शरीर को पोषण नहीं मिलेगा, वैसे ही हमने शब्द बहुत इकट्ठे कर लिए पर उनमें जी नहीं रहे। शब्दों में ऊर्जा है, पर उसका पता देखने या समझने से नहीं, उपयोग करने से — आचरण में उतारने से — चलता है।

**प्रश्न: गुरु जी, आज अध्यात्म में भी "मेरा गुरु ठीक, उसका गुरु खराब" — एक-दूसरे की निंदा होती है, और कहीं-कहीं गुरु के पांव धोकर पानी पिलाया जाता है। गुरु क्या है? (P18-0004)**

गुरु मेरा-तेरा होता है क्या? गुरु तो ज्ञान का प्रतीक है, गुरु तत्व है — शरीर नहीं, शब्द है, और उन शब्दों में ऊर्जा है। जैसे नल से पानी आता है, नल तो निमित्त है; पूरे विश्व में पानी एक ही जगह से आता है। इसलिए गुरु दो हो ही नहीं सकते — शरीर अनेक हो सकते हैं, जैसे नल अनेक हैं। गुरु का मतलब है जो तेरा-मेरा से धारण किए अहंकार से मुक्त करा दे — गुरु कोई व्यक्ति विशेष नहीं। इतिहास में कोई गुरु अपने शिष्यों को पांव धोकर नहीं पिलाता था। प्रथम गुरु मां-बाप हैं — कोई मां-बाप अपने बच्चे को पैर धोकर पिलाता है क्या? वह सीने से लगाता है और चाहता है कि बच्चा उससे भी ऊपर जाए। गुरु ऐसा होता है।

## **प्रश्न: गुरु जी, आज कई जगह फीस भरकर 10 दिन में आत्मज्ञान या ध्यान कराने की बात होती है — इसे कैसे देखें? (P18-0005)**

आध्यात्मिक मंडियां खुल गई हैं; ध्यान, योग, ज्ञान, भक्ति सब बेचा जा रहा है। मैं भी अज्ञानता में ऐसी एक मंडी में गया था कि 10 दिन में आत्मज्ञान हो जाएगा — वहां जाकर बहुत रोया। झूठ का पता चल गया, पर सच का पता नहीं था, इसलिए किसी को सिद्ध नहीं कर सकता था; तब तय किया कि अब इस पर काम करूंगा और मेरे काम से ही पता चलेगा कि सच क्या है। ध्यान कभी बेचा-खरीदा जा ही नहीं सकता — ध्यान तो अपने आप घटित होता है; बस आपको देखना है कि आप कहां फंसे हो। आखिर में ध्यान, ज्ञान, भक्ति, योग सब छूट जाएगा और बचूंगा मैं — जो सत्य है, और सत्य ब्रह्म तक ले जाएगा। लौकिक चीजों में धोखा पाप है, पर पैसे के लिए परमात्मा के नाम से आत्मा को भटकाना महापाप है — यह ड्रग्स बेचने से भी ज्यादा खतरनाक है। गेरुआ वस्त्र के लिए महापुरुषों ने बलिदान दिया है; उसे पहनकर भीख मांगना, उसे धंथा बनाना शर्म की बात है।

## **प्रश्न: गुरु जी, सच्चे ज्ञान-पिपासु के लिए इस मंडी में यह पहचानना बड़ा कठिन है कि सच्चा कौन है और झूठा कौन — वह क्या करे? (P18-0006)**

खोजी पक्का है तो उसे मिलेगा — मेरा अनुभव है कि वह वहीं रुकेगा जहां वह होगा जिसे वह खोज रहा था। तीन तरह के साधक होते हैं: अभाव में, कुभाव में और स्वभाव में। अभाव वाले राजसी प्रवृत्ति में चले जाते हैं — उन्हें धन, लग्जरी लाइफ चाहिए, क्योंकि जीवन में अभाव था। कुभाव वाले तांत्रिक बन जाते हैं, लोगों को गालियां देते, धमकाते हैं, क्योंकि झगड़ा करके घर से निकले हैं। स्वभाव वाला साधक कहता है मैं खोज करूंगा इससे आगे क्या है — वही ज्ञान को उपलब्ध होता है; बाकी दोनों संसार में घूमते रहते हैं। उसके पास जल्दी भीड़ नहीं लगती, क्योंकि भीड़ राजसी-तामसी में है; उसके पास वही पहुंचते हैं जिन्हें ज्ञान चाहिए। पवित्रता के सामने सबको झुकना पड़ता है — अगर आप में पवित्रता है तो एक न एक दिन आप परमात्मा तक पहुंच जाएंगे, पक्का। बस अपनी पवित्रता बनाए रखो। साधक का जीवन ऐसा है जैसे कोई कुंवारी लड़की अकेली समाज में निकले — पवित्रता बचाने वाले कम, अपवित्र करने वाले अनेक मिलेंगे। ज्यादातर लोग तंत्र-मंत्र में उलझकर या मुक्ति की ओर जाकर भी "कुछ बन बैठते" हैं।

## प्रश्न: गुरु जी, आपका संक्षिप्त परिचय दीजिए — आपकी यात्रा कहां से और कैसे शुरू हुई? (P18-0007)

जन्मभूमि उत्तर प्रदेश, रहना ज्यादातर मुंबई में। बचपन से समाज के लिए कुछ करने की इच्छा थी — मान-सम्मान के लिए भी। करते-करते समझ आया कि संसार में एक-दूसरे को मानते हैं तो वहां लेनदेन है; लेनदेन नहीं तो कोई किसी को नहीं मानता। फिर ज्योतिष हुआ — उसमें भी लगा कि यह पूर्ति नहीं, बस नाम-शोहरत-पैसा है। फिर संन्यासी हुआ, उस समय सच में कुछ नहीं चाहिए था; पर आश्रम में तीन दिन रहकर देखा कि जो छोड़कर आया, उससे ज्यादा पंचायत तो यहां है। गुरु ने कहा "धीरे-धीरे होगा", फिर "माता के पास बैठ, 41 दिन में बता देगी" — मैंने कहा पहले पक्का करो कि मैं 41 दिन जीवित रहूंगा, और बाद में मत कहना कि भाव से नहीं बैठा। उन्होंने कहा "तू विवेकानंद नहीं" — मैंने कहा आपने पक्का कर दिया कि आप रामकृष्ण नहीं, पर मैं विवेकानंद जैसा हूँ — अबोध, भटका हुआ, अशांत, मुझमें काम-क्रोध-मद-लोभ सब है, पर इस कमी को निकालने के लिए किसी हद तक जा सकता हूँ। फिर 12 (बल्कि 14) ज्योतिर्लिंग, चार धाम, गंगासागर की यात्रा की। जहां भी गया, वही रामायण-गीता की बातें, या "जन्म-जन्म लगते हैं, यह महापुरुषों को होता है" — ये आत्मविश्वास तोड़ने वाली बातें हैं। जब सब एक ही ब्रह्म से है तो मैं महापुरुष क्यों नहीं? महापुरुष भी होने से पहले वैसे ही भटक रहे थे। तत्व एक ही है, बस बोध का अंतर है — किसी ने समझा, किसी ने नहीं समझा। पर पक्का था: कुछ मिले या न मिले, मरना भी पड़े, मुझे आत्मज्ञान तक पहुंचना है।

**प्रश्न: गुरु जी, खोज के दौरान जब लोगों ने आपको मारा, गाली दी या फटे कपड़ों के कारण अपमान किया, तब आपने क्या किया और क्या समझा? (P18-0008)**

ओंकारेश्वर में कड़ाके की ठंड में होटल वाले ने "लगेज नहीं है" कहकर कमरा नहीं दिया — वह रात एक-एक मिनट भारी पड़ी। 2019 में एक लगभग 60 वर्ष के महात्मा को "नर्मदे हर" कहा तो उन्होंने सीने पर कई बार मारा; मुझे भी गुस्सा आया, पर मैं खोज में था, मैंने उस गुस्से को देखा और कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। आज भी उनके लिए कोई मलाल नहीं — वे अपनी जगह सही थे; यहां कोई गलत-सही नहीं, सब अपनी-अपनी स्थिति में जी रहे हैं। उन्होंने मुझे फटे कपड़ों के कारण मारा; चेन-घड़ी-कार होती तो कुर्सी देते — लोगों ने आवरण पर इतनी पकड़ बना रखी है। वेंटिंग रूम में भी कपड़े देखकर रोका, टिकट नहीं पूछा। फटे कपड़ों ने मुझे और समाज को समझने का बड़ा मौका दिया। कोई बिना मतलब गाली देता तो कई दिन-महीने मलाल रहता, पर मैंने प्रतिवाद नहीं किया — समय और ऊर्जा बचाई, क्योंकि मुझे आगे जाना था और वे रुके हुए थे; उनसे लड़ता तो मेरी पॉजिटिव ऊर्जा उनमें जाती। आज वे घटनाएं हंसी दिलाती हैं, किसी के लिए मलाल नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, आप यहां तक कैसे पहुंचे — आखिरी समय कैसा था और आत्मज्ञान कैसे हुआ? (P18-0009)**

2019 तक खोजते-खोजते थक गया — महात्माओं के पास गया, साष्टांग किया, पर कुछ नहीं मिला। सारे बंधन छूट गए थे: समझ आ गया कि पृथ्वी पर न कोई मुझे मानता है, न मैं किसी को मानता हूं। मंदिर के सामने भिखारियों, पागलों के पास भी बैठा कि शायद किसी रूप में भगवान मिल जाए, सबसे एक ही प्रश्न — आत्मज्ञान कैसे होगा? चिल्ला-चिल्लाकर रोता था: परमात्मा, तूने कहीं का नहीं छोड़ा — न गृहस्थ में, न नशे में, न आश्रम में, न चले में फंसाया; बस इतना बता दे मैं करूं क्या। एक महाराज जी ने आश्रम के लिए एक करोड़ देने की बात कही — मैंने कहा मुझे आत्मज्ञान के अलावा कुछ नहीं चाहिए। उन्होंने कहा "तुम्हें पूरे भारत में कोई आत्मज्ञान नहीं करवा सकता" और "भक्त और भूत पर कभी विश्वास मत करना"। फिर 2020 में भंदा गांव में अपने आप हो गया — प्रश्न हट गए, उत्तर हो गए। मेरा अनुभव है: अगर आप पक्के खोजी हो तो कोई मिले या न मिले, प्रकृति स्वयं गुरु है — आखिरी गुरु वही है, जीवन उसी से है, और आखिर में वही सिखा देगी।

### प्रश्न: गुरु जी, "अपनों की कुटिया" बनाने का भाव क्या है? (P18-0010)

12 साल पूरे होने पर भाव हुआ कि कुटिया का निर्माण हो, जहां साधक के लिए भोजन और रहने की व्यवस्था निःशुल्क हो। मैंने आश्रमों में बड़ी दुर्दशा देखी — जगह तभी मिलती है जब या तो आप बहुत पैसे वाले हो (तो AC रूम खुल जाएगा), या आश्रम की इतनी सेवा करो कि वे खुश हो जाएं। गुरु शिष्य के साथ नहीं, करोड़पति के साथ भोजन करता है; शिष्य भगवान ढूँढ़ने गए थे और करोड़पतियों के बर्तन मांज रहे हैं; गरीब आए तो "महाराज जी साधना में हैं", अमीर रात 2 बजे आए तो दरवाजा खुल जाता है — यह शर्म की बात है। इसलिए ऐसी कुटिया बनाई जहां किसी का बैकग्राउंड काम नहीं करेगा, बस साधक रह सकते हैं, प्रेम होगा, और भोजन सात्विक व ईमानदारी का होगा। मेरा भाव हुआ कि अब ज्ञान से भी और तन से भी सेवा करूंगा — यह कार्य परमात्मा का है, मेरे पास करने को अब कुछ है नहीं, कोई इच्छा नहीं रही।

### प्रश्न: गुरु जी, आत्मज्ञान होने के बाद क्या परिवर्तन और अनुभव आता है?

(P18-0011)

आत्मज्ञान के बाद आप इस जगत से छूट जाते हो, फिर ब्रह्म की यात्रा शुरू होती है। जैसे कोई स्त्री गर्भ धारण कर ले तो पक्का हो गया कि अब वह मां बनेगी — मां बनने की यात्रा अपने आप चल रही है; वैसे ही आत्मज्ञान के बाद पक्का हो जाता है कि अब मिलन हो जाएगा, कोई संशय नहीं। वह साधक बस परमात्मा का इंतजार कर सकता है; उसे किसी साधन की आवश्यकता नहीं रहती — मिला तो भी ठीक, नहीं मिला तो भी ठीक। राग-द्वेष पूरी तरह खत्म हो जाता है। पहले मैं समझता था आत्मज्ञान आखिरी स्थिति है, पर अब पता चला कि यात्रा तो अब से शुरू हुई; अब तक तो जगत से छूटने की यात्रा हो रही थी।

**प्रश्न: गुरु जी, उस समय (आत्मज्ञान की) मन-स्थिति, भाव-स्थिति क्या होती है?**

(P18-0012)

सीधा जवाब है — कुछ भी नहीं। घुमा-फिराकर बहुत बोला जा सकता है। ध्यान किया नहीं जाता, घटित होता है; जो घटित होता है उसमें "कुछ है", और जब "है" से छूट गए तो उसमें कुछ भी नहीं। दो "मैं" हैं — एक अहम मैं जो "मेरा" से धारण किया, और एक परम सत्य। जब तक आप राग-द्वेष में हो, अहम मैं मजबूत है; राग-द्वेष से मुक्त हुए तो अहम मैं गिर जाता है और परम सत्य बचता है। वह अनुभव से परे है, बोला नहीं जा सकता — उसके आसपास रहकर महसूस किया जा सकता है, जैसे फूल से पूछोगे कैसी सुगंध है तो जवाब नहीं, पर पास रहोगे तो सुगंध आएगी — बशर्ते आपकी नाक ठीक हो, यानी एहसास करने की क्षमता हो। जिसे आत्मज्ञान हुआ है, उसके आसपास पहुंचोगे तो खुद अपने आप में हो जाओगे; मन रोकना नहीं पड़ेगा, रुक जाएगा। मेरा एक ही कहना है — बस खोजी बन जाओ; कोई बताए या न बताए, प्रकृति स्वयं गुरु है।

**प्रश्न: गुरु जी, जैसे मुंबई जाते हुए रास्ते में माइलस्टोन आते हैं, वैसे साधन पथ में जो माइलस्टोन (अनुभव) आते हैं, वे क्या हैं और उनसे क्या होता है? (P18-0013)**

जब आप इस यात्रा में चलते हो, प्रकृति आपको देने लगती है — वह भी जिसके योग्य आप हो ही नहीं। अगर अस्वीकार करते हुए, छोड़ते हुए आगे बढ़े तो ठीक। जब व्यक्ति वाक सिद्धि पर पहुंचता है तो ज्यादातर लोग वहीं फंस जाते हैं — कामना से मुक्त होने निकले थे और फिर कामना में गिर जाते हैं। जिसे सच में कुछ नहीं चाहिए, वह वाक सिद्धि के ऊपर आज्ञा चक्र तक पहुंचता है, और आज्ञा चक्र खुल गया तो वह फिर गिर नहीं सकता। बस अपने आप को कामनाओं से बचाना है — प्रकृति वो देगी जिसकी योग्यता आपमें नहीं थी; अब देखना है कि आप वो लेते हो या "वो" (परमात्मा) को।

**प्रश्न: गुरु जी, साधना के दौरान जब खाने और दवा तक का अभाव हो गया, तब आपने क्या किया? (P18-0014)**

विरार में एक कमरे में साधना कर रहा था, जो मदद करते थे वे बाहर चले गए और उनका फोन बंद था। मेरे पास जो चाहिए था वह नहीं था — एक-दो दिन शक्कर पीकर रहा; चावल, नमक, इंडक्शन था। दवा के लिए भी पैसे नहीं थे; बहन एक स्टेशन दूर रहती थी, उधार देने वाले दुकानदार तरसते थे — बस एक फोन करना था, पर मैंने तय किया कि अब कोई विकल्प इस्तेमाल नहीं करूंगा, देखूंगा होता क्या है। बरसात का पानी बिस्तर तक आ गया; मैं अपने इष्ट (मां काली, काल भैरव) से रोकर बोला — तुझे शक है तो परीक्षा ले ले, मुझे मुझ पर शक नहीं, मैं तेरे भरोसे निकला हूँ। उस रात मृत्यु को पूरी तरह स्वीकार किया, जरा भी संशय नहीं। समझ के साथ मृत्यु का चुनाव करना सरल नहीं है; आवेश, जज्बात या दुख में लोग आत्महत्या कर लेते हैं — वह आसान है, क्योंकि वे अपने दुख से बच रहे हैं, उन्हें मरने में सुख लगता है। फिर सुबह हुई, मैं भी उठा — क्योंकि पक्का था कि कुछ मिले या न मिले, मुझे आत्मज्ञान चाहिए।

**प्रश्न: गुरु जी, केदारनाथ की पैदल यात्रा में डर और दर्द के बीच आपने क्या समझा? (P18-0015)**

पांव अखंड ज्योति संभालते-संभालते सड़ गए थे, चलना कठिन था, पर संकल्प था कि दवा नहीं लगाऊंगा। कुछ लड़कों ने साथ चलने का आश्वासन दिया पर आगे चले गए, और मैं रात में अंधेरे जंगल में फंस गया जहां शेर-भालू घूमते हैं। एक आदमी ने अपने गांव में रुकने को कहा, पर मैंने सोचा — आज रुक गया तो डर मुझ पर हावी होकर मुझे हरा देगा, मुझे इस हार से निकलना है; मरना तो है ही। मैं पैदल चल दिया, और मैंने अनुभव किया कि मौत के सामने पैर का दर्द कम हो गया, चाल तेज हो गई, आंसू भी चले गए। बाद में मैं उस लड़के के पास गया और कहा — जिंदगी में कभी किसी के साथ ऐसा मत करना; आज मुझे कुछ हो जाता तो जिम्मेदार कौन होता, मैं तुम्हारे भरोसे चल दिया था। भरोसा देना तो उस भरोसे को पूरा करना, नहीं तो भरोसा देना मत।

**प्रश्न: गुरु जी, बद्रीनाथ में मिले उन अनाम महात्मा का क्या प्रसंग है? (P18-0016)**

बद्रीनाथ में पैरों से खून टपक रहा था; एक बुजुर्ग महात्मा मिले जिन्होंने गर्म कुंड में पैर धुलवाए, बिना पैसे अंदर दर्शन कराए, भोजन-कमरा दिलाया, साबुन-तेल लाए और लोगों से कहते रहे "ये केदारनाथ-बद्रीनाथ से पैदल आए हैं"। अपनी कुटिया में उन्होंने एक काँपी खोली — उसमें पैसे थे — और कहा "जितना पैसा चाहिए ले लो"; उस पैसे को देखते ही मेरा पैसे का जो अहम भाव था, वहीं खत्म हो गया। मैंने कहा कुछ नहीं चाहिए। उन्होंने नाम-पता नहीं बताया; बस चलने लगी तो बस के पीछे दौड़ते रहे — जिंदगी में कोई मेरे लिए ऐसे नहीं दौड़ा था। वे क्या थे, कुछ बोल नहीं सकता — अद्भुत थे।

**प्रश्न: गुरु जी, आपकी इष्ट मां काली रहीं — आपका देवी साधना से क्या संबंध है?**

(P18-0017)

मैं उन्हें प्राण से भी ज्यादा मानता हूँ, और यह मेरा अनुभव है कि मुझसे ज्यादा वह मुझे मानती हैं। मेरा प्रेम पूरी तरह उनके प्रति है।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या आप रामकृष्ण परमहंस (जैसी स्थिति में) हैं? (P18-0018)**

हम लोग शरीर में फंस गए हैं। रामकृष्ण परमहंस को हम एक शरीर में देखते हैं — वह शरीर का नाम है, लेकिन उस शरीर के पीछे कोई है। उस स्थिति में कोई पहुंच गया तो बस उसके जैसा हो गया, और वह बेनाम हो गया। नाम लेते ही एक चेहरा सामने आ जाता है, पर उसके पीछे वे बेनाम थे। ऐसा है तो पता चल जाता है कि ऐसा है या नहीं — क्योंकि "है" और "नहीं है" से परे भी कुछ है, जो था, है और रहेगा; तब पता चल जाता है कि वही है।

**प्रश्न: गुरु जी, माया का प्रसार समुद्र जैसा है, समाज रुकने नहीं देता, साधना पर चलते ही विघ्न आते हैं और मन बहाने बना देता है। वह कृपा कैसे प्राप्त हो कि व्यक्ति एकनिष्ठ होकर साधन पथ पर चल पाए और पार हो जाए? (P18-0019)**

बाहर के संसाधन बेकार नहीं, उपयोग करने लायक हैं — हम-आप बात कर पा रहे हैं तो इन्हीं संसाधनों की वजह से। देखना यह है कि आप उसके लिए चले हो या उसकी कृपा के लिए। अगर उसके लिए चले हो तो दुनिया की कोई ताकत रोक नहीं सकती। कृपा के लिए चले हो तो कृपा मिल जाएगी — कोई शरीरधारी आप पर कृपा कर देगा, वैभव से जो चाहिए। तो देखो — कृपा के लिए चले हो या कृपा वाले के लिए, लीला के लिए या लीलाधारी के लिए। पहले कृपा आएगी, बाद में कृपा वाला; अगर आपने कृपा पकड़ ली तो कृपा वाले तक नहीं पहुंच पाओगे, और कृपा को त्याग दिया तो कृपा वाले तक पहुंचने से कोई रोक नहीं सकता।

**प्रश्न: गुरु जी, साधन पथ में बार-बार अवरोध आता है — गिरते-पड़ते फिर वहीं आ जाते हैं, मन में बड़ी तड़प है। इस अवरोध को कैसे मिटाएं? (P18-0020)**

यह साधन की तड़प नहीं, मान की तड़प है — मान की तड़प से साधन चाहिए। आप खोजिए: मान, सम्मान, समाज का सम्मान — यह मैं व्यक्तिगत आप पर नहीं, सब पर बोल रहा हूं। अगर सच में मेरी तड़प है तो फिर वह मुझसे दूर क्यों है — यह आपको ही देखना पड़ेगा, मेहनत करनी पड़ेगी।

**प्रश्न: गुरु जी, वह इतना दयावान है, फिर भी मेरी व्याकुलता घट जाती है और मैं किसी में लिप्त हो जाता हूं — माया बड़ी प्रबल है, उठाकर फेंक देती है। ऐसा क्यों? (P18-0021)**

किसकी माया? प्रभु की माया नहीं, मेरी माया। इस संसार में हमने एक संसार का निर्माण किया है और उसमें फंसे हैं — मैं अपने बनाए जाल में फंसा हूं; मैंने माया का निर्माण किया और उसी में फंसा हूं, प्रभु की माया में नहीं। प्रभु की माया में तो महात्मा भी जीकर गए — उन्होंने भी लोगों से भोजन, कपड़ा लिया, साधनों का उपयोग किया, राज भी चलाया।

**प्रश्न: गुरु जी, जीव और ब्रह्म के बीच जो झीना पर्दा है — वह तो उन्हीं के द्वारा रचित है, हमारा नहीं? (P18-0022)**

वह पर्दा आपने लगाया है — इच्छा-अपेक्षा का पर्दा; वह उसका नहीं। अगर उसका होता तो हम कभी उठा भी नहीं सकते। हम अबोध थे नहीं, अबोध बनते गए — कामनाओं, इच्छाओं, अपेक्षाओं, वासनाओं, अपने तरीके और उम्मीद में गिरते गए; कर्म की वजह से अबोधता धारण कर ली, और वह बच्चों वाली अबोधता नहीं, चालाकी वाली हो गई। अगर पर्दा उसका होता तो इतनी व्याकुलता के बाद कब का उठा देता — और सबके लिए उठा देता; कौन मां-बाप चाहेगा कि वह अपने बच्चों से न मिले? पर्दा आपने लगाया है, आपको ही उठाना पड़ेगा — यह पर्दा मात्र इच्छा-अपेक्षा, कामना, मान और सम्मान का है।

**प्रश्न: गुरु जी, समाज और परिवार के जो दायित्व मिले हैं, उनसे हटना तो आसान है — घर छोड़कर भाग जाओ, एकांत में बैठ जाओ। पर क्या इससे दायित्व से परे हो जाते हैं? (P18-0023)**

शरीर से छोड़ा, मानसिक कहां छोड़ा? मानसिक छूट जाए तो बड़ी बात है। हिमालय में बैठने वाले कई चिलम, सुल्फा, चरस पीकर कहते हैं हम सीधी बात करते हैं — कब तक? जब तक नशा रहता है। शरीर से छोड़कर भागने से कुछ नहीं होता; यह मानसिक यात्रा है, शारीरिक नहीं। वे आवेश-जज्बात में निकल गए, समझ से निकले ही नहीं, और "कुछ" के लिए निकले थे। जो "कुछ नहीं" में निकलता है, "कुछ नहीं" में साधना करता है, वही आगे बढ़ पाता है। शुरुआत बहुत मायने रखती है — किस भाव से भक्ति या साधना शुरू की। "भावे विद्यते देवा" — भाव में ईश्वर का वास है। वाल्मीकि जी "मरा-मरा" कहकर ब्रह्म में समा गए, जबकि आज "राम-राम" कहकर लोग नहीं पहुंच पा रहे — क्योंकि उन्होंने सब छोड़कर, पहुंचने के लिए उपयोग किया था।

**प्रश्न: गुरु जी, योग मार्ग से संबंधित प्रश्न — ग्रंथि भेद (ब्रह्म ग्रंथि आदि तीन ग्रंथियां) और चक्रों के बारे में कुछ प्रकाश डालें। (P18-0024)**

आत्मज्ञान कैसे हो, मैं सीधा बता सकता हूं; सातों चक्र कैसे खुलेंगे, वह बता सकता हूं — पर चक्रों के नाम पूछोगे तो मुझे मालूम नहीं, क्योंकि मैंने मूल पर काम किया। मुझे चक्रों से मतलब नहीं था; पांचवें (वाक सिद्धि) पर 2010 में और आज्ञा चक्र पर 2019-20 में पहुंचा, तब समझ में आया। किसी राज्य पर नियंत्रण करना है तो मूल राजा को पकड़ लो — और वह राजा आप स्वयं हो: मुझे मेरा खुद का ज्ञान कैसे हो, बस इसी पर काम करना है। चक्रों में एक बार फंसे — ग्रंथि हो, मूलाधार, स्वाधिष्ठान, सहस्रार — यह सब सिर्फ जानकारी है। चक्र हमने बंद नहीं किए, अपने आप बंद हुए हैं और अपने आप खुलेंगे। जहां तक मैंने समझा, ये बेईमानी से बंद हुए हैं और ईमानदारी से खुल जाएंगे; जल्दी खोलना है तो सत्कर्म कर दो। ताला जिस चाबी से बंद होता है उसी से खुलता है — चाबी ईमानदारी है; पर ताले में जंग लग गई है, उसे सत्कर्म, पश्चाताप और लगातार घिसने से हटाना होगा, फिर खट से खुल जाएगा। ईमानदारी की चाबी नहीं लगाओगे तो और कोई चाबी नहीं लगेगी।

**प्रश्न: गुरु जी, भक्ति, ध्यान, योग और ज्ञान — इनमें से किस मार्ग से जाएं?**

(P18-0025)

किसी भी मार्ग से जाओ, कभी न कभी आपको ईमानदारी पर आकर खड़ा होना पड़ेगा — ईमानदारी करते ही आध्यात्मिक यात्रा की शुरुआत होती है। चाहे कितनी भी साधना कर लो, अगर ईमानदारी नहीं अपनाई, बेईमानी का त्याग नहीं किया, तो बस साधना कर रहे हो, होगा कुछ नहीं। भक्ति मार्ग में भी समझ से ही जाओगे, ध्यान और योग में भी समझ चाहिए, और आखिर में चाहिए ज्ञान — इसलिए ज्ञान मार्ग को श्रेष्ठ कहा गया है। पर ज्ञान मार्ग की शुरुआत सबसे कठिन है, क्योंकि बाकी मार्गों में कोई सहारा (क्रियाएं, आधार) होता है जो धीरे-धीरे छूटता है; ज्ञान मार्ग में आप ही होते हो, सहारा शुरुआत में ही छोड़ना पड़ता है, और शुरुआत ही ईमानदारी से है। चाहे किसी भी मार्ग से चले जाओ, आना यहीं है — और यह सबसे सीधा है।

## **प्रश्न: गुरु जी, अगर तेजी से यात्रा करनी हो, जल्दी पहुंचना हो, तो क्या करें?**

(P18-0026)

तेजी से यात्रा करनी है तो सत्कर्म — सेवा से भी श्रेष्ठ। सेवा से वैभव बढ़ेगा, किसी को सताने से दरिद्रता बढ़ेगी, पर सत्कर्म फल की तरह है और सेवा बीज की तरह — फल को खा भी सकते हो, लगा भी सकते हो, और वह कई वर्षों तक फल देता है। सत्कर्म से निर्विकार होने में सहायता मिलती है। इसमें धोखा नहीं है; कमियां हमारी तरफ से हैं, उसकी तरफ से नहीं — वह तो तैयार है। बड़ा चुंबक और छोटा चुंबक: छोटे ने अपने आप को बांध रखा है, बस वह छुड़ा ले तो बड़ा तुरंत खींच लेगा। आपको कर्ता का अधिकार मिला है, आपने अनेक जंजीरों में खुद को बांधा है — गांठ आपने बांधी, खोलनी भी आपको पड़ेगी। लगे रहो, और किसी को दोष मत देना — कोई मार्ग बता रहा है तो ठीक, नहीं बता रहा तो भी ठीक; यह स्वयं की यात्रा है, प्रकृति स्वयं गुरु है।

## **प्रश्न: गुरु जी, "कुछ नहीं" की स्थिति में पहुंचने पर परमात्मा कैसे दिखता है — वह हमसे पीछे क्यों रह गया? (P18-0027)**

"कुछ नहीं" में आप होते हो, और आप हो तो वह है। हमने सबको आगे और उसे सबसे पीछे खड़ा किया — उससे वादा किया कि पहले सब, बाद में तू; और उसने वही किया, क्योंकि वह न देता है न लेता है, और हम लेनदेन में आ गए तो लेनदेन वालों को आगे कर दिया। अब लेनदेन से थककर उसकी जरूरत लग रही है, पर भीड़ नहीं छोड़ रही, क्योंकि आपने उन्हें आदत डाल दी। जब आप "कुछ नहीं चाहिए" की स्थिति में आ जाओगे तो सब एक-एक करके छोड़कर चले जाएंगे, और वह कहीं भी खड़ा दिख जाएगा, भीड़ में भी। पहले रिक्त तो हो — पात्र एक है, उसमें माया और उसे दोनों को नहीं रख सकते।

**प्रश्न: गुरु जी, जो गृहस्थ है और समाज में रह रहा है, संन्यासी नहीं — क्या उसके लिए यह मार्ग बहुत कठिन नहीं हो जाता? (P18-0028)**

मेरे व्यक्तिगत अनुभव से इस मार्ग में गृहस्थ के लिए आसान है, संन्यासी के लिए कठिन। (बने हुए नहीं, संन्यासी-स्थिति की बात कर रहा हूँ) कोई संन्यासी तब बनता है जब उसे जगत में अपने से ज्यादा दुखी लोग दिखते हैं और वह उन्हें दुख से मुक्त करना चाहता है। अब वह काम नहीं कर सकता — खोज करे कि काम करे — और जो भी उसे भोजन कराता है, उसे कुछ चाहिए: एक वक्त की रोटी खिलाकर कहेगा "महाराज जी, कुछ उपाय बताओ, सट्टे का नंबर बताओ"। अगली रोटी तभी मिलेगी — बड़ी दुविधा है; संन्यासी के लिए बहुत ज्यादा ईमानदार रहना बड़ा मुश्किल है। जैसे कुंवारी स्त्री परिवार में सुरक्षित है पर अकेली निकले तो नहीं — वही संन्यासी की स्थिति है। गृहस्थ को अपने को ही तारना है, जगत को नहीं। मैंने परमात्मा से मांगा — ऐसा मार्ग देना जिसमें मैं भी न रहूँ, बस तू, और सामने वाले को मेरी जरूरत न पड़े — प्रत्यक्ष मार्ग; इसलिए चैनल का नाम भी "आध्यात्मिक प्रत्यक्ष ज्ञान" है। मुझे समझ लिया तो मेरी जरूरत आपको नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः" — मन ही बंधन और मोक्ष का कारण है। मन पर इंद्रियजीत कैसे हों — क्या प्रैक्टिस से अनुशासन बने कि मन बाधक न बने? (P18-0029)**

प्रैक्टिस करेंगे तो एक आदत बन जाएगी, फिर उस नई आदत में जीने लगोगे; नई आदत बहुत अच्छी लगती है, पर बाद में वही हाल होता है। सीधा-सरल मार्ग बताऊँ — अगर पूरी तरह रुक जाना चाहते हो तो "कुछ नहीं चाहिए", बस बात खत्म। यह भाव पूर्णतः अपने अंदर खड़ा कर दो — शुरुआत भी इसी से करो, आखिरी भी यही होगा।

**प्रश्न: गुरु जी, अंतर्मन से भाव यही रहता है कि मुझे कुछ नहीं चाहिए, फिर भी परिवार और समाज के दायित्व में वे सब चीजें आकर खड़ी हो जाती हैं और अवरोध उत्पन्न करती हैं — क्या करें? (P18-0030)**

गिरने दो ना, उनका काम है गिरना; आपको तो "कुछ नहीं चाहिए"। वे तो गिरेंगी, और यहां तक गिरेंगी — एक समय ऐसा आएगा जब जीवन और मृत्यु में से किसे चुनना है, इस स्थिति तक आएंगी। ऑकारेश्वर में जब मेरे पास पूरी पृथ्वी पर जाने-रहने को कोई जगह नहीं थी, न परिवार के काम का था न समाज के, उस स्थिति में भी मुझे एक करोड़ दिया जा रहा था। ये चीजें इस स्थिति तक आएंगी।

**प्रश्न: गुरु जी, वाक सिद्धि क्या होती है? उसके बारे में कुछ प्रकाश डालें। (P18-0031)**

वाक सिद्धि मतलब — या तो जो होने वाला है वह आप बता देते हो, या जो बोल देते हो वह हो जाता है। मुझे 2010 में मिली, जब मैं ज्योतिष था। बोलता था "जा, तू यहां गिर जाएगा" तो गिर जाता, "बीमार है, ठीक हो जाएगा" तो ठीक हो जाता — नया-नया था, मजा आता था कि मुझमें कितनी ताकत है। बस एक बात थी कि मुझे कुछ चाहिए नहीं था; अगर "चाहिए" में होता तो वहीं गिर जाता। उसका उपयोग हुआ पर कामनाओं में नहीं हुआ, इसलिए बच गया। बाद में समझ आया कि इसमें गिर जाएंगे, तो पूरी तरह त्याग कर दिया; 2016-17 तक उससे निकल गया।

**प्रश्न: गुरु जी, ज्योतिष क्या है — क्या यह हमें कहीं मदद करता है? और क्या ज्योतिष से जाना जा सकता है कि हम आत्मज्ञान की स्थिति के कितने करीब हैं?**

(P18-0032)

ज्योतिष एक मैथ (गणित) है; सदुपयोग करें तो ठीक, पर इसका व्यापार हो गया — रत्न का कोई रेट नहीं होता, जितना चाहो उतने में बेच दो, कौन जांच कराने जा रहा है। ग्रहों की डिग्रियों से किसी की बुद्धि की प्रबलता, आत्मविश्वास (सूर्य), मन (चंद्र), हार्मोन (शुक्र), हड्डियां (शनि), क्षमता, आकर्षण आदि समझे जा सकते हैं। पर आत्मज्ञान से इसका संबंध नहीं — यह भौतिक जगत तक है; जब आपको कुछ चाहिए, तब यह काम करता है। जिसे कुछ नहीं चाहिए, वहां यह कुछ काम नहीं करता — उस पर तंत्र-मंत्र, वास्तु कुछ भी लागू नहीं होता। अध्यात्म में पूरी तरह आ गए तो इसका कोई मतलब नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, आपने सीधा रास्ता बताया कि "कुछ नहीं चाहिए" — डिजायर खत्म कर दें। क्या 55-60 की मेरी उम्र में भी यह ठीक रहेगा? और यह होगा कैसे?**

(P18-0033)

हां, ठीक रहेगा। पर पहले "चाहिए" को पूरी तरह समझ लीजिए — महात्मा भी भोजन मांगते थे, बिस्तर मांगा, रास्ता पूछा; पर किसके लिए? लोगों के लिए, क्योंकि उन्हें काम करना था। एक रिटायर्ड टीचर ने कहा अध्यात्म कुछ शब्दों में बता दो — मेरे अंदर से निकला: उम्मीद से मुक्त करा लो, बस। यह अध्यात्म का आखिरी शब्द है; पर अभी आप उस लायक हो या नहीं, यह देखना है। यात्रा ऐसे है: पहले "अपने तरीके से चाहिए" से छुड़ाओ — सीधा "चाहिए" से नहीं निकल सकते। फिर "चाहिए" (जरूरत) में आओगे — कपड़ा, भोजन, मकान, जितने में जी सको, बस उतना; उतने में साधना करो, सत्कर्म होगा, विकारों से धीरे-धीरे हटोगे। "चाहिए" ज्यादा दिन टिकेगा नहीं, और एक समय आएगा कि अब कुछ भी नहीं चाहिए — उसके बाद होता है आत्मज्ञान। बाहर के रूप से छूटकर अपने पिंड में आते हो तो आत्मज्ञान, और इस पिंड से मुक्त होते हो तो ब्रह्मज्ञान।

**प्रश्न: गुरु जी, "कुछ नहीं चाहिए" तक की यात्रा में अवधूत स्थिति कैसे बनती है और वह कैसी होती है? (P18-0034)**

जब तक "अपने तरीके से चाहिए", जीव दस दिशाओं (चार दिशा, चार कोण, ऊपर, नीचे) में यात्रा करता है। खोजी ग्यारहवीं दिशा में यात्रा करता है कि अपने तरीके से छुड़ाना है; छुड़ा लेता है तो वह दिशा भी खत्म, वह "चाहिए" में, जरूरत में जीता है। और "चाहिए" से भी मुक्त हो गया तो बनती है अवधूत स्थिति — वह ज्ञान के बहुत करीब रहता है, उसी में आज्ञा चक्र खुलता है। वह स्थिति पागल जैसी होती है: कुछ नहीं चाहिए तो बचा क्या, जिए कैसे? न ज्ञान, न अज्ञान, न सुख, न दुख, न पाप, न पुण्य, न मैं गृहस्थ, न संन्यासी — कुछ भी नहीं; खोज भी खत्म, जिसकी खोज थी वह भी नहीं चाहिए। मैं उस स्थिति से गुजरा था — एक ही आवाज निकलती थी: तूने कहीं का नहीं छोड़ा, न जिंदा न मुर्दा, आत्महत्या भी नहीं कर सकता इतनी समझ दे दी। सारी मांगें, इच्छाएं, उसकी भी कामना खत्म — "हो गया" भी खत्म हो जाता है। उसके बाद ज्ञान होता है।

## **प्रश्न: गुरु जी, लोग कहते हैं "शून्य हो जाओ" — क्या शून्य ही अंतिम स्थिति है?**

(P18-0035)

मैं कहता हूँ नहीं, शून्य में भी कुछ है। शून्य भी तो कुछ है — आप कितना भी छोटा या बड़ा शून्य खींचो, अंदर एक दायरा बन गया, बाहर का हिस्सा अलग हो गया — दो हो गए, द्वैत तो है ही। और गणित अपना-अपना है: कोई शून्य इधर लगाता है, कोई उधर लगाकर दस गुना बढ़ा देता है। शून्य के भी पीछे जाना है, क्योंकि शून्य के पीछे आप हो — जहां कुछ भी नहीं; न सुख, न दुख, न पीड़ा, न हंसी, न रोना। वहीं अद्वैत है।

## **प्रश्न: गुरु जी, आपकी साधना का क्रम क्या था — कितने घंटे, कौन-सी साधना, कोई अनुशासन या क्रम था? (P18-0036)**

मैं घंटों में नहीं गया, आज भी नहीं हूँ। जब से निकला, मेरा सोना-उठना, कहां जाना, किससे बात करना — यह निर्णय आज तक मैंने नहीं किया; मैं समय से पार की यात्रा कर रहा हूँ, रात-दिन नहीं देखा। उस स्थिति से पहले बस इतना पक्का था कि ईमानदारी से चलना है। साकार रूप में बहुत किया — हवन, सवा-सवा लाख मंत्र जाप; दरवाजे-खिड़की बंद कर हवन के धुएं में सोता था, फेफड़े तक जाम हो गए। पागलों से बात, पूजा-पाठ, श्मशान, पेड़-पत्थर — मुझे बस पहुंचना था; वह कहीं भी है, तो मैं कौन होता फैसला करने वाला कि यहां है, यहां नहीं। शुरुआत भक्ति मार्ग से, फिर त्राटक व कई साधनाएं, फिर ध्यान लगाया पर लगता ही नहीं था — बाद में पता चला कि ध्यान तो मुझसे है। आश्रम की गति तीन दिन में समझकर छोड़ दी; समय नहीं गंवाया, मूल पर काम किया। बस इतना पक्का था कि किसी को कभी तकलीफ नहीं देनी — कोई कहे एक चींटी मारने से तुम्हारी मृत्यु टल जाएगी, तो भी मृत्यु स्वीकार कर लूं।

## **प्रश्न: गुरु जी, वह चिलम वाली घटना क्या थी? (P18-0037)**

नर्मदा तट पर एक बाबा जी मिले जो चिलम पीते थे और बोले थे "मैं बताऊंगा"। जिसने कहा कि बताऊंगा, मैं उसके सोने के बाद सोता और उठने से पहले उठ जाता। एक दिन उन्होंने चिलम मेरी तरफ बढ़ाई — मैंने पूछा, इससे परमात्मा मिलेगा? पक्का बताइए; मिलेगा तो दिन भर पीऊंगा, मुंह से चिलम निकालूंगा ही नहीं। बोले नहीं, इससे परमात्मा नहीं मिलेगा, एक नशा है। मैंने कहा तो मुझे नशा नहीं करना, मैं आत्मज्ञान के लिए निकला हूँ — उन्होंने चिलम हटा ली। मैं कभी किसी का खंडन नहीं करता था; जो कोई जो बता दे, करता था, और जब वह कहता "जाओ", तो धन्यवाद देकर निकल जाता — इतना समय दिया, यही बहुत है। पर बात हमेशा खोज की ही करता था।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या आपने घर-परिवार छोड़ दिया? परमात्मा की खोज और सामने वाले व्यक्ति में आप किसे प्राथमिकता देते थे? (P18-0038)**

मैं जिससे बात करता, उसे इतना मूल्य देता था कि जिसे खोज रहा हूँ वह परमात्मा भी आकर कहे "चलो, इसे छोड़ो", तो कहूँगा रुको, इसकी बात खत्म हो जाए तब चलूँगा। मैंने कुछ नहीं छोड़ा — लोगों ने मुझे छोड़ दिया, क्योंकि मैं बेकाम का हो गया; कुछ नहीं तो पकड़ेगा कौन। आखिर मैं मैं अपने आप से मिल गया, क्योंकि किसी ने पकड़ा ही नहीं। घर भी नहीं छोड़ा, मां से आज भी मिलने जाता हूँ। मुझे कुछ छोड़ना, कुछ पकड़ना नहीं था — बस समझना था, जीना था। मां ने शादी को कहा तो मैंने कहा जिस दिन जरूरत होगी, कर लूँगा; मैंने किसी से एंग्रीमेंट नहीं किया। संन्यासी बनने के लिए संन्यासी नहीं हुआ, समझने के लिए हुआ था — जैसे विद्यार्थी स्कूल से बाहर आकर यूनिफॉर्म उतार देता है। कपड़ा तो बस व्यवस्था के लिए है; मैं उसका सम्मान करता हूँ पर धीरे-धीरे उससे भी छूट गया।

**प्रश्न: गुरु जी, "कुछ बनना" और "कुछ समझना" में क्या अंतर है? (P18-0039)**

जब तक कुछ बनना है, आप संसार में होते हो और दायरे में जीने लगते हो — आपका समझना भी दायरे में होगा; बनने में आप दूसरों को समझाते हो, क्योंकि उनके लिए बनना है, और ऐसे ही भटकते रहते हो। जब बनना नहीं, कुछ करना है, तब आप प्रकृति के साथ होते हो और अपने आप को समझने लगते हो। मुझे बनना नहीं था, समझना था, जीना था। आज भी अपना आसन, खाट खुद उठाता हूँ, भोजन बनाता हूँ, बर्तन माँजता हूँ — मैं अपाहिज नहीं; अपाहिज होता तो प्रकृति किसी को भेजती। मैं अपने जीवन का हिस्सा आपको नहीं बनाना चाहता; आप जिसके लिए आए हो, वह करो। मुझे न संन्यासी बनना था, न गृहस्थ — मैं बस जीना चाहता था।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या आपको मां का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ? (P18-0040)**

प्रत्यक्ष दर्शन हुआ — यह मैं पक्का नहीं बोल सकता; लेकिन उन्होंने मेरे जीवन में इतना पक्का कर दिया कि वे हैं। इसमें जरा भी संशय नहीं — लोगों को हो, मुझे नहीं मालूम, पर मुझे इसका प्रत्यक्ष हुआ है कि वे हैं।

**प्रश्न: गुरु जी, सत्यता और ईमानदारी पर बात तो सब बहुत करते हैं, पर यह बहुत कठिन डगर लगती है — और आसान भी। ऐसा क्यों? (P18-0041)**

जब आपको अपने तरीके से चाहिए, तब कठिन है; और अपने तरीके से छोड़ दिया तो कुछ करना ही नहीं है। बस भाव का खेल है — "भावे विद्यते देवा", भाव में ईश्वर का वास है।

**प्रश्न: गुरु जी, जब अवधूत स्थिति तक पहुंचते हैं, तो क्या फिर मां का (इष्ट का) दर्शन संभव है? (P18-0042)**

संभव है, लेकिन उसमें कुछ चाहिए नहीं ना। आत्मज्ञान होता है तो जीवन में यह पक्का हो जाता है कि जिसकी आप भक्ति कर रहे हो, वह है। उसके बाद परमात्मा की यात्रा होती है। प्रत्यक्ष इसलिए सामने नहीं आते क्योंकि यह शरीर उतनी ऊर्जा झेल नहीं पाएगा। कहते हैं मार्कंडेय ऋषि ने नर्मदा परिक्रमा में मां से शक्ति का एहसास मांगा, एक हवा के झोंके से उनकी उंगली काली हो गई और वे बोले "बस मां, इससे ज्यादा बर्दाश्त नहीं"। कहते हैं उनकी परिक्रमा पूरी नहीं हुई — क्योंकि वे "कुछ होकर" चले थे और रास्ते में ही "कुछ नहीं" हो गए; मार्कंडेय ऋषि ही नहीं बचे तो परिक्रमा किसकी पूरी हो? और जो आज कहते हैं कई परिक्रमाएं पूरी हो गई — वे खत्म होने चले थे पर परिक्रमा का अहंकार धारण कर बैठे।

**प्रश्न: गुरु जी, लोग आपसे आशीर्वाद या कृपा मांगते हैं — आप क्या कहते हैं? (P18-0043)**

मेरे पास न पंजा है, न अंगूठी। मैं कह देता हूं — मेरी हालत देख रहे हो? मैंने अपने ऊपर आशीर्वाद दिया, अपने ऊपर कृपा कर दी तो मेरी यह हालत हो गई — कहीं का नहीं रहा, फटे कपड़े पहनकर पागल की तरह घूम रहा हूं। तुमको आशीर्वाद दूंगा तो क्या हालत होगी, पता है? ऐसी कृपा चाहिए क्या? ज्ञान होने के बाद भी दिसंबर-जनवरी की ठंड में मंदिर पर पड़ा रहता था; कोई बिस्तर लाने को कहता तो कहता "मत लाओ, जरा मुझे जीने दो"।

**प्रश्न: गुरु जी, हम अपने आप को इस प्रतीत (जगत) से अलग क्यों पाते हैं —  
अलगाव और अपूर्णता का कारण क्या है? (P18-0044)**

रात में कई जगह आसन बदलकर देखता था कि क्या है प्रतीत और क्या हूँ मैं, मैं इससे अलग क्यों हूँ। पता चला — अलगाव का कारण बस अपनी जरूरत है: मैंने अपने तरीके से अपनी जरूरत को "कुछ" समझ लिया और "है" में पूरी तरह फंस गया। मैं दृष्टा हूँ, "है" परिवर्तनशील है, अपूर्ण है; मैं पूर्ण हूँ। अब पूर्ण-अपूर्ण के चक्कर में फंस गया — अपूर्ण को पूर्ण करना चाहता हूँ, उससे अपने को पूर्ण करना चाहता हूँ, उसे स्थिर करना चाहता हूँ, जबकि पता है कि वह स्थिर नहीं होगा। हमारी अपूर्णता बस इतनी है कि हम अपूर्ण से अपने आप को पूर्ण करना चाहते हैं; यह भाव छूट जाए तो आप स्वयं पूर्ण हो, बात खत्म। (साधक ने "पूर्णमदः पूर्णमिदं..." श्लोक को इसका प्रमाण बताया।)

**प्रश्न: गुरु जी, आत्मज्ञान किस स्थिति में होता है? (P18-0045)**

कोई किस स्थिति में मां-बाप बनता है? जब कोई स्त्री गर्भ से बच्चे को जन्म देती है तो वह मां बन जाती है और उसके स्तन से दूध आ जाता है। ठीक वैसे ही जब कोई भी पूरी तरह निर्विकार हो जाता है, तो उसी समय वह आत्मज्ञानी हो जाता है — बस उसके अंदर से ज्ञान प्रकट हो जाता है। बस यही है, बात खत्म।

**प्रश्न: गुरु जी, मैं ध्यान हटाकर सिर्फ नाम पर केंद्रित होकर निरंतर नाम जप कर रहा हूं और सोच को रोक रहा हूं — क्या यह सही है? इसका क्या परिणाम होगा, या यह भटकाव है? (P18-0046)**

देखो आप नाम जप किस स्थिति में और किस भाव में कर रहे हो। ध्यान और विचार रुके नहीं, ध्यान अब नाम पर, इष्ट पर चला गया, क्योंकि आपने अपने आप को उसकी जरूरत बता दी — जैसे नशा छोड़ने के बाद भी मन नशे पर जाता है, क्योंकि शरीर को आदत दे दी। अब दो में से एक भाव है — या तो नाम जप के सहारे भौतिक जगत का कुछ पाना चाहते हो, या निर्विकार होना चाहते हो। नाम जप से लाभ तो है, लेकिन अगर आप ईमानदार हो तब ठीक, ईमानदार नहीं हो तो नाम जप से पतन होगा — कितने राक्षसों ने नाम जप से प्रसन्न करके शक्ति इकट्ठा की और फिर अपना पतन कर लिया, क्योंकि वे बेईमान थे। ऊर्जा आएगी तो खर्च वहीं होगी जैसा कर्म करोगे। अपने आप से पूछो — मैं पूरी तरह ईमानदार हूं, हां या ना; परसेंटेज में मत जाना, परसेंटेज में गए तो खुद के साथ बेईमानी है। लोग सलाह देंगे कि नाम जप के सहारे धीरे-धीरे बेईमानी छूट जाएगी — नहीं, नाम जप के सहारे बेईमानी नहीं छूटेगी, ऊर्जा मिलेगी। बेईमानी छोड़कर, ईमानदारी अपनाकर नाम जप करो। जितने भी नाम जप से पहुंचें, उन्होंने पहले अपने गुरु के प्रति पूरा समर्पण किया — "मुझे कुछ नहीं चाहिए, मैं इस जीवन से थक चुका हूं, अपना आत्मिक कल्याण करना चाहता हूं" — और गुरु ने पूरी तरह जांचकर तब नाम दिया। आज तो पंजीरी की तरह नाम बांटा जा रहा है।

**प्रश्न: गुरु जी, कहा जाता है कि नाम जप से मन पर ठहराव आता है — क्या नाम जप से विचार रुक जाते हैं और पिछले कर्म कटते हैं? (P18-0047)**

नाम जप से ठहराव मन पर नहीं, आप पर आएगा — जब आप अनुचित छोड़कर उचित में आओगे। अलग-अलग सोच, दृश्य और भाव जो आ रहे हैं, नाम जप उन्हें एक तरफ केंद्रित करके कुछ देर रोकने में सहायक है, लेकिन फिर वहीं आ जाओगे, क्योंकि जैसा आप काम करते हो और जैसी जिंदगी जी है, वैसे ही विचार अंदर घूमते हैं। विचार वही आते हैं जो हमने पांच इंद्रियों — पांच कैमरों — से इकट्ठा किया है; जिस जगह या व्यक्ति को कभी देखा नहीं, उसके बारे में सोच भी नहीं सकते। नाम पर ध्यान तो चला जाएगा, लेकिन पिछला भी तो खत्म करना है, और नाम जप के बाद आप कर्म भी तो कर रहे हो। वाल्मीकि की तरह बैठ गए और उपलब्धि तक उठे ही नहीं, तब बात अलग है। नहीं तो कर्म पर ध्यान देना पड़ेगा — पिछला कैसे हटे और आगे कर्म बंधन न बंधे। आप दिन भर लाखों माला जप रहे हो और अपराध भी कर रहे हो, तो क्या आत्मिक कल्याण होगा? नाम जप आदत बन गया तो कोई बात नहीं, लेकिन कर्म ठीक तरीके से करो और पहले पूरी तरह ईमानदार हो जाओ।

**प्रश्न: गुरु जी, बेईमानी क्या है — दूसरों के साथ और अपने साथ? (P18-0048)**

जब आप किसी की भावनाओं को बिना मतलब ठेस पहुंचाते हो, तो वह बेईमानी है; जब योग्यता से ज्यादा चाहिए, तो बेईमानी है। पूरी तरह बताएं तो कर्म करते हुए छल, कपट, चोरी, बेईमानी, चापलूसी, मक्कारी, धूर्तता, पाखंड — इनमें से एक भी करते हो तो बेईमानी है; यह दूसरों के साथ है। अपने साथ बेईमानी है — मान की इच्छा, योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा, दिखावा, और बड़ा-छोटा बनने की इच्छा। आप अपने आप को कुछ बनाना चाहते हो, जबकि आज तक कोई बन नहीं पाया; सम्मान के लिए पागल की तरह घूमते हो — जहां लायक हो वहां सम्मान मिले तो फर्क नहीं पड़ता, जहां लायक नहीं वहां मिले तो एकदम प्रसन्न हो जाते हो। इन चार चीजों का जिंदगी से त्याग करो — तभी कुछ होगा, नहीं तो नाम जप करो चाहे कुछ भी, भटकते रह जाओगे। जैसे मकड़ी दूसरों को फंसाने के लिए जाला बनाती है और आखिर में खुद उसी में खत्म हो जाती है, वैसे ही आपने खूब शब्द इकट्ठे कर लिए, पर उनमें जी नहीं रहे — मान और पैसे के लिए लोगों को सुनाते हो। इसलिए कैसे भी अपना आत्मिक कल्याण कर लो।

**प्रश्न: गुरु जी, झूठ का क्या प्रभाव है — कोई झूठ बोले तो उसे कैसे देखा और दंडित किया जाता है? (P18-0049)**

आपसे कोई झूठ बोले तो आप क्या करोगे? जैसी गलती होगी, उसे देखते हुए दंड दोगे — गलती कैसी है: जान हानि, मान हानि या वस्तु हानि; और किस स्थिति-परिस्थिति में की। अगर व्यक्ति ने आत्मरक्षा में किया है, या वह पागल है, मंदबुद्धि है या अबोध है, तो छोड़ दिया जाता है। सामने वाला कौन है, उसकी उम्र क्या है — यह भी देखा जाता है। जैसे पत्नी कहे कि बच्चे को एक थप्पड़ मारा, तो आप बस समझा दोगे; पर कहे कि आपकी मां को मार आई, तो आपकी प्रतिक्रिया अलग होगी। मां बहू को सुधारने के लिए मार दे तो दुनिया नहीं थूकेगी, पर बहू मां को मार दे तो मर्यादा के खिलाफ है। किसी को मारकर ठीक किया जाता है, किसी को समझाकर। बुद्धिमान आदमी देश, काल, स्थिति-परिस्थिति और सामने कौन है यह देखकर फैसला लेता है; मूर्ख बस फैसला लेता रहता है। वैसे ही आपने किस तरीके से, किसके साथ और किस हानि के लिए झूठ बोला — सब देखना पड़ेगा।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या नाम जप से कर्म जल्दी भोगने को मिलता है? (P18-0050)**

प्रार्थना की जा सकती है कि जल्दी से जल्दी भोग दे दो, या "हम आपसे मिलना चाहते हैं" — व्याकुलता दिखाई जा सकती है। नाम जप से प्रार्थना होती है; वह सुनी भी जा सकती है, नहीं भी — सत्कर्म से प्रार्थना सुनी जाती है। मूल है ईमानदारी और सत्कर्म; फिर नाम जप करो या न करो, आपके ऊपर है। अगर ईमानदारी और सत्कर्म नहीं अपनाए, तो कितना भी नाम जप करो, कितनी भी प्रार्थनाएं करो, कोई मतलब नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, पुराना प्रारब्ध रुक जाए या खत्म हो जाए और नया प्रारब्ध न बने — इसके लिए क्या करें? (P18-0051)**

पुराने को रोकने का कोई उपाय नहीं, वह भोगने का है। आगे न बने, इसके लिए बस ईमानदारी अपना लो — कर्म का सिद्धांत है, पिछला खत्म हो रहा है और अगला तब बनेगा जब आप बेईमानी करोगे। ईमानदारी में प्लानिंग नहीं करनी पड़ती, बेईमानी में प्लानिंग करनी पड़ती है — एक झूठ के लिए सौ झूठ बोलने पड़ते हैं। सब फिक्स था, आपने ही फिक्स किया था; अब बेईमानी करके एक और फिक्स कर रहे हो — एक खत्म हो रहा, एक बन रहा। ईमानदारी में जो पीछे फिक्स किया था वह भोगकर जा रहा है, आगे तैयार नहीं हो रहा। भोगना तो पड़ेगा ही — ऐसा नहीं कि बेईमानी करके उससे बच गए; बस हिसाब में और कुछ न चढ़े, इसलिए बेईमानी मत करो। बोलते-बोलते यहां तक आ गए, अब बंद करिए। सबसे पहले जीवन में ईमानदारी अपनानी पड़ेगी, तभी कुछ होगा।

**प्रश्न: गुरु जी, अगर इस जाल से निकलकर सच बोलें, तो अपने ही लोग कहते हैं "पहले अच्छे थे", घर वाले कहते हैं इतना सच मत बोलो, ऑफिस में कहते हैं इस विषय में सच मत बोलना — तब क्या करें? (P18-0052)**

मेरे समझ से आज तक आपको किसी ने सीधे बेईमानी की क्लास नहीं दी — धीरे-धीरे सिखाया गया। बचपन में किसी के खेत से गन्ने तोड़कर लाने को कहा, तब पता नहीं था तो बेईमान वह था जिसने भेजा; लेकिन जब पता चल गया, तब फिर क्यों लाए, क्यों आदत डाल ली? फोन आया, सामने वाले ने कहा "बोल दो कि अभी नहीं है" — उसने झूठ बोलने को कहा और आपने बोल दिया। ऑफिस वाले कहते हैं सच मत बोलना — ठीक है, तो फिर अपने आप को आध्यात्मिक मत बोलो; बेईमानी करो तो सीना ठोककर करो कि मैं बेईमान हूं, फिर भोगो। यह मजा छोड़ नहीं रहे — लगता है जब तक बेईमानी और लल्लो-चप्पो की बात न करें, रस ही नहीं आता, दिन नहीं बीतता। अगर आप करना चाहें तो बहुत सीधी और आराम की यात्रा है।

### **प्रश्न: गुरु जी, बेईमानी करें लेकिन उसका परिणाम न आए — क्या ऐसी कोई व्यक्ति या सेटिंग है? (P18-0053)**

ऐसी कोई सेटिंग है तो कर लो — बेईमानी का फल तो आएगा ही, भोगना पड़ेगा। अगर संसार में रहकर ईमानदारी मुश्किल लगती है और साधक बनकर रहना है, तो साधक बनकर रहो — यहां साधक के लिए भोजन और रहने की निशुल्क व्यवस्था है; जीने के लिए भोजन, कपड़ा, तेल-साबुन हम देंगे, जीवन भर रहो। संसार में कौन भेज रहा है? यहां तीन दिन में किसी ने आपका नाम तक नहीं पूछा, गिलास उठाने को भी नहीं कहा। अंदर पुराना चलता रहे तो चलने दो, आराम से पड़े रहो — बाहर की व्यवस्था मैं दे सकता हूं, अंदर की परेशानी आपकी है।

### **प्रश्न: गुरु जी, आप अपना अनुभव क्यों नहीं बताते? (P18-0054)**

मैं क्यों अपना अनुभव बताऊं, और कैसे सिद्ध होगा कि मैं जो बता रहा हूं वह सही है? हर आदमी महान बनने के लिए अच्छा अनुभव ही बताता है, पिटने वाली घटना कौन बताता है? साधना आप लोग कर रहे हो, यहां के बारे में आप बताओ। मैं तो बस आपको व्यवस्था दे सकता हूं — आपके प्रश्नों के उत्तर, भोजन और रहने की व्यवस्था, निशुल्क। यहां सत्संग के अलावा कोई बात नहीं होती, लेन-देन की तो बात ही न करना। मेरा भाव है कि आप जिसके लिए आए हो वह हो, आपकी यात्रा जल्दी से जल्दी हो — इसलिए दिन में 12 से 16-18 घंटे तक समय देता हूं; स्वास्थ्य खराब रहता है फिर भी कमिटमेंट है, शरीर को संभालकर रखता हूं।

### **प्रश्न: गुरु जी, आध्यात्मिक मार्ग में अनुशासन क्या है और उसका आध्यात्मिक प्रगति में क्या उपयोग है? (P18-0055)**

जिसको भी साधना करनी है, वह पहले पूरे नियम को समझे और फिर उस नियम में पूरी तरह जिए — या तो खुद नियम बनाए या किसी के बनाए नियम में रहे, और उसका पूरी तरह पालन करे कि खुद से कोई गलती न हो। यही अनुशासन है। अनुशासन का मतलब है अपने आप को सुधारना — वही काम करना जिससे मैं सुधरूं, वह काम नहीं करना जिससे बिगड़ूं। बोलचाल, उठना-बैठना, बातचीत, देखना — पांचों इंद्रियों का उपयोग उचित है या अनुचित, यह देखते हुए करना। उचित कर रहे हो तो आत्मिक स्तर उठेगा, अनुचित कर रहे हो तो गिरेगा। जैसे किसी को ऐसे मत देखो कि सामने वाले को बुरा लगे — वह नहीं चाहता और आप देखते जा रहे हो, चाहे काम भाव से, तो नजर हटा लो।

**प्रश्न: गुरु जी, अनुशासन और नियमों में क्या अंतर है, और क्या नियमों का सही चयन भी जरूरी है? (P18-0056)**

नियम बनाया गया अनुशासन के लिए; उस नियम में रहना ही अनुशासन है — चाहे आपने बनाया हो या किसी और ने। नियम सही है, कल्याणकारी है या नहीं, यह जांचने की क्षमता आप में होनी चाहिए। अपना बनाया नियम मनोगत होता है, जो अच्छा लगता है वैसा बन जाता है — इसलिए पहले देख लो कि मैं नियम बनाने लायक, पात्र हूँ या नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, कोई नियम लिया है, 10 में से 8 बार हो पाता है, 2 बार चूक जाते हैं तो मन में ग्लानि होती है; कभी लगता है नियम में ही फंस रहे हैं, कोई नियम न रखें — क्या करें? (P18-0057)**

सुधार के लिए नियम में रहना बहुत जरूरी है — अनुशासन होना ही चाहिए, चाहे आप अपने ऊपर करें या कोई आपके ऊपर करे। अनुशासन नहीं है तो जीवन पशुओं की तरह रहेगा — खा-पीकर निकल जाओगे, फिर आगे कहां जाओगे? अनुशासन इसलिए जरूरी है कि सुधारना है; सुधार गए तो फिर अनुशासन की जरूरत नहीं — जैसे भोजन की जरूरत तब तक है जब तक भूख है, और डिग्री मिल गई तो विद्यालय, शिक्षक, किताब-कॉपी, बस्ता, ड्रेस सबसे मुक्त होकर अपना कर्म करने लगते हो।

**प्रश्न: गुरु जी, ट्रेनिंग के लिए 40 दिन मौन रहें, दिन में एक बार खाएं — क्या इससे संकल्प शक्ति बढ़ेगी? सच्चा मौन क्या है? (P18-0058)**

न खाने से क्या होगा — पहले पता होना चाहिए कि करना क्यों है। सिर्फ मुंह से मौन रहने से क्या होगा? 40 दिन मौन का मतलब है पांचों इंद्रियों से कुछ न मांगना, कोई इच्छा न रखना। मुंह से मौन रखकर लिख-लिखकर देते हो, तो सबको परेशान कर बैठते हो — इससे अहम भाव बढ़ता है, और जब इशारा कोई नहीं समझता तो गुस्सा आता है; इससे अच्छा सीधे मुंह का उपयोग कर लो। आंख बंद करोगे तो कान, नाक, स्पर्श तो खुले रहेंगे। जब आपको कुछ नहीं चाहिए, तब आप मौन हो — जैसे इस वक्त मैं आपके लिए बोलकर भी मौन हूँ, क्योंकि अपने लिए कुछ नहीं बोल रहा, आपको समझा रहा हूँ। जब कुछ नहीं चाहिए और आप किसी के लिए बोल रहे हो, तो बोलकर भी मौन हो, सब करके भी मौन हो — यही मौनता है, आप स्थिर हो। इस मौन स्थिति में पहुंचने में 2011 से 2020 तक लग गए। पांच कर्म इंद्रियां, पांच ज्ञान इंद्रियां — इन्हीं से हम लेन-देन करते हैं।

**प्रश्न: गुरु जी, उस पार पहुंचा हुआ कोई व्यक्ति कहता है कि मुझे नाव की जरूरत नहीं — आप भी उस पार से बोल रहे हैं, तो क्या नाव की जरूरत है? (P18-0059)**

मैं तो खुलकर बोल रहा हूं कि जरूरत है — पकड़ के आ जाओ। कोई भी नाव पकड़ लो, जिसकी नाव आपको मिल जाए, पकड़कर आ जाओ। मैं यह नहीं कह रहा कि यही नाव पकड़ो — किसी की भी नाव पकड़ लो और आ जाओ।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या मौन अपूर्ण या आंशिक भी होता है? (P18-0060)**

आप लोगों ने हर चीज को परसेंटेज में बांट दिया है। या तो मौन हो या बोल रहे हो — हां या ना। कोई मर रहा हो तो क्या कहते हो कि इतना परसेंटेज मर गया, इतना बाकी है? सांस है तो जिंदा, सांस निकल गई तो मर गया — बात खत्म। वैसे ही या तो आप मौन हो या नहीं हो। मौन का मतलब है कुछ नहीं चाहिए — हो गए मौन, बात खत्म; यही मौनता है।

**प्रश्न: गुरु जी, जीवन अनित्य है, जगत अनित्य है, विचार चंचल और अनित्य हैं, जीवात्मा शाश्वत सत्य है — उसे निज स्वरूप में कैसे पहुंचाएं, और व्यवहार में यह कैसे हो? (P18-0061)**

बस रूप को छोड़ दो, निज स्वरूप में पहुंच जाओगे। शब्दों में कह देना आसान है; व्यवहार में करना है तो रसपान करना छोड़ दो। रसपान है — ऐसे शब्द सुनना जो सुख देते हैं, दृश्य देखना, सुगंध-दुर्गंध के चक्कर में, स्वाद के चक्कर में, स्पर्श में — पांचों इंद्रियों से रस लेना। बीच-बीच में जो हिलोरें आती हैं, यानी रसपान की इच्छा जग जाती है, उसे देखो कि कहां रसपान में लगे हो — यह आप ही को देखना है। रसपान ही तो बात करवा रहा है। भोजन शरीर की आवश्यकता के रूप में खाओ, जुबान की तृप्ति के लिए खाओगे तो रस रहेगा। जो जुबान को रुचिकर लगे वह नहीं खाना।

**प्रश्न: गुरु जी, सुगंध-दुर्गंध, सुनने, देखने, स्वाद और स्पर्श में गलती कहां होती है — कोई व्यंजन की खुशबू अच्छी आई और "अच्छी है" कह दिया, तो उसमें अपनी इच्छा कहां है? (P18-0062)**

अपनी इच्छा तब है जब आप किसी को बुरा बोल रहे हो — राग-द्वेष में फंस गए। गटर को बुरा बोलते हो कि उसमें दुर्गंध है, पर गटर का क्या दोष, उसे गंदा करने वाले तो हम ही हैं। दुनिया में जो भी वस्तु है, जैसी है वैसी सुगंध-दुर्गंध दे रही है — आप कौन होते हो तय करने वाले कि अच्छा है या बुरा? कुछ अच्छा है तो बुरा भी होगा, और यही अच्छे-बुरे का भाव राग-द्वेष में ले जाता है। जरूरत है तो ले लो, नहीं तो नहीं। कोई बोल रहा है तो वह अपने तरीके से बोल रहा है; आप कौन फैसला करने वाले कि अच्छा बोल रहा है या बुरा? कोई खूबसूरत, कोई बदसूरत — उसे भी उसी ने बनाया, उसका क्या दोष? स्वाद अच्छा-बुरा, स्पर्श कोमल-कठोर — इंद्रियां आपको उपयोग करने के लिए मिली थीं, अच्छा-बुरा बोलने के लिए नहीं; आप निर्णय में फंस गए, गड़बड़ी यहीं हुई। जैसे एक टैक्सी वाला रात भर गाड़ी चलाता है और कहता है कि रात में भी तो किसी को एयरपोर्ट-स्टेशन जाना है — दुनिया में सब अपनी-अपनी जगह ठीक है; गड़बड़ी तब है जब आप कहते हो यह ठीक है, वह ठीक नहीं। और आखिर तुम कौन हो — अच्छे या बुरे? घुमा-फिराकर फंस जाओगे। इसलिए न अच्छा, न बुरा — उपयोग करो और निकल लो।

**प्रश्न: गुरु जी, जब तक मेरे सारे प्रश्नों का समाधान न हो जाए, क्या मैं यहां रुक सकता हूं? और यहां साधकों को सहायता कैसे मिलती है? (P18-0063)**

एक दिन से लेकर आजीवन रुको — यह किसी व्यक्ति विशेष के लिए नहीं, सभी साधकों के लिए कहा गया है; पूछने की भी जरूरत नहीं। यह आप ही लोगों के लिए बनाया गया है, इसलिए संकोच की कोई जरूरत नहीं; यहां का कोई मालिक होता तो अब तक नाम, आधार, कितने दिन रुकोगे सब पूछ लेता। हमने सेवक का चुनाव किया है, मालिक या गुरु का नहीं। आपका स्तर कैसे उठे — अगर आपको लगता है कि आप किसी तरीके से उठ सकते हो और उसमें धन, तन या ज्ञान की सहायता चाहिए, तो उचित होगा तो मैं जरूर सेवा करूंगा, नहीं तो सीधा मना कर दूंगा। आपको सिद्ध करना पड़ेगा कि यह करोगे तो यह होगा, क्योंकि जीवन में आपको जो सही लगा, बाद में उसी ने पीड़ा दी — जरूरी नहीं कि जो आपको सही लगे वह सही हो, मुझे भी देखना होगा। आगे भीड़ बढ़ी तो लोगों की सुरक्षा के लिए आधार-मोबाइल जमा कराया जा सकता है, मुझे तो कोई जरूरत नहीं — कुटिया ऐसी खुली रहती है, मेरे पास एक कपड़ा है।

**प्रश्न: स्वामी जी, क्या आप 13 साल से ऊपर अकेले सिर्फ एक कपड़े में, बिना बैग के घूमे? यह कैसे हुआ? (P18-0064)**

हां, बैग कुछ नहीं रखा — बस तन पर कपड़ा। एक ATM रखता था; 2020 या 2021 में नर्मदा जी में नहाते समय पैन कार्ड, आधार, ATM सब गिर गया, फिर कभी नहीं बनाया, जरूरत ही नहीं पड़ी। एक जगह से दूसरी जगह कुछ नहीं ले जाता था, बिस्तर तक नहीं — ठंड में भी; मंदिर में किसी ने कुछ दिया तो वहीं सो लिया, वहीं छोड़ दिया, अगली जगह नहीं ले गया। शुरुआत में जब संन्यासी हुआ, तो 2011 में कुछ समय के लिए झोली रख ली थी, पर फिर समझ आया — एक परमात्मा, एक मैं और एक कपड़ा, बात खत्म; तभी से छोड़ दिया। हम चीजों का वजन कंधों पर लेकर चल रहे हैं, यही वजन उतार दिया जाए तो बात खत्म। मठ से तीसरे दिन इसलिए निकल गया कि जो छोड़ने गया था — नाम, शोहरत, पैसा — वहां उससे ज्यादा वही था।

**प्रश्न: गुरु जी, आपने बताया था कि आप फटे कपड़ों में बड़े होटलों, AC, ट्रेन और प्लेन में गए और खुद को मापा — ऐसा क्यों किया, और हम अपनी स्थिति कैसे जांचें? (P18-0065)**

स्वाभाविक जीवन में देखो कि हर चीज में रस आ रहा है या नहीं — जांचना हो तो बड़ा आसान है। मैं होटल, AC, प्लेन में जाता था तो सब मुझे देखते थे, क्योंकि उनके साथ बैठता था; भीख मांगता तो कोई नहीं देखता। आदमी का पहला शौक भोजन, फिर कपड़ा, फिर मकान — इसलिए फटे कपड़ों में 500-1000 का खाना खाओ तो लोग, वेटर, मैनेजर अलग तरह से देखते हैं। एक बार एक महाराज जी को होटल में रोक दिया कि पैसे नहीं होंगे — मैंने पूछा, आप कौन होते हो सोचने वाले, सबसे एडवांस लेते हो क्या? ट्रेन में टीटी, RPF और वेटिंग रूम वाले भी कपड़े देखकर रोकते थे, फिर टिकट देखकर सॉरी बोलते। टिकट जांचना उनका काम है — टिकट है तो जांचो, नहीं है तो फाइन करो — पर कपड़े देखकर रोकने का अधिकार नहीं। मैं ऐसे ही नहीं घूमा; जांचना चाहता था कि लोग किस तरीके से काम करते हैं और व्यक्ति में क्या देखते हैं, क्योंकि मुझे संसार में काम करना है — झोपड़ी वाले और अरबपति, नीचे वाले और ऊपर वाले, दोनों को एक जगह बैठाना है। उस कपड़े में दोनों ने मुझसे खुलकर बात की। मैंने देखा कि सब आवरण में फंसे हैं, आवरण के पीछे कोई जा ही नहीं पा रहा; जब तक आवरण के पीछे नहीं जाएगा, अपने होने का पता कैसे चलेगा? इसलिए कई साल फटे कपड़ों में घूमना पड़ा। यहां देखो — किसी का बैकग्राउंड नहीं पूछा जाता, करोड़पति हो या कोई, सब साधक बनकर एक जगह बैठते हैं।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या कपड़े सभ्यता के प्रतीक नहीं हैं? फटे-पुराने कपड़े देखकर नए लोग असहज होते हैं और गलत समझते हैं। (P18-0066)**

कपड़े तन ढकने के लिए हैं, बस — और किस लिए? फिर अपनी-अपनी संस्कृति और इलाके के हिसाब से पहनावा है। आपके बच्चे महंगे से महंगे कपड़े फाड़कर पहनते हैं — वह सभ्यता है या असभ्यता? उन्हें क्यों नहीं मना करते? जब अपने बच्चों और घर पर दाल नहीं गलती, तो दूसरों को सभ्यता सिखाने मत चलो; सभ्यता पहले अपने घर में लाइए। मैं कब कहता हूँ कि मैं समझदार हूँ, सभ्य हूँ या मजबूत हूँ — ज्ञानी पागल ही होता है; क्या इस दुनिया में पागल नहीं घूम सकता? मैं अपनी जिंदगी स्वतंत्रता से जी सकता हूँ। अगर कोई अभद्रता लगे, कोई अंग खुला हो, तब सामाजिक व्यक्ति होने के नाते बोलिए — समाज ने तो नागा साधुओं को भी स्वीकार किया है। पहली नजर में कोई असहज हो, तो हो — अगर मैं कहूँ कि आपके नए कपड़े देखकर मुझे तकलीफ है, उतारो, तो क्या उतार दोगे? सबकी अपनी जिंदगी है, जीने दो। हां, अगर किसी के करने से समाज को तकलीफ हो रही है, गलत फैल रहा है, तब बोलिए। मैंने आज तक किसी को फटे कपड़े पहनने को नहीं कहा। अगर मैं आपसे कुछ मांगूँ, तब आप शर्त रख सकते हो कि ऐसे रहना पड़ेगा।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या कभी ट्रेन या फ्लाइट में सत्संग हुआ? लोगों का व्यवहार कहां कैसा होता है? (P18-0067)**

हां, ट्रेन में हो जाता था — अगल-बगल वाले सुनने आ जाते और खुश हो जाते। एक बार मुगलसराय से गुवाहाटी जाते हुए ऊपर की सीट पर लगभग 24 घंटे सोया रहा, न बाथरूम गया न कहीं; उतरा तो नीचे वाली महिला सकपका गई कि कुछ हुआ तो नहीं — फिर बातचीत हुई और सत्संग हो गया। प्लेन में कोई किसी से मतलब नहीं रखता। स्लीपर और जनरल डिब्बे में सबसे ज्यादा व्यवहार होता है — खाना बांटते हैं; रिजर्वेशन में कम, AC में और कम, फर्स्ट क्लास में बिल्कुल नहीं — जितना पैसा बढ़ता है, व्यवहार उतना घटता है। इसलिए मैं शुरू से आखिर तक हर जगह गया, देखा कि लोग क्या देखते हैं — आवरण।

**प्रश्न: गुरु जी, ज्ञान कैसे प्राप्त होता है, मुक्ति कैसे होती है और वैराग्य कैसे जगता है? (P18-0068)**

जब बेईमानी छोड़ने की बात समझ में आ जाए — कि बेईमानी से मेरा पतन हो रहा है — तब वैराग्य जगेगा, और वैराग्य जगेगा तब आप राग-द्वेष से मुक्त होने के लिए उस तरफ निकलोगे। ईमानदारी ही मुक्ति का मार्ग है। ज्ञान कैसे प्राप्त होता है — जितना प्राप्त किया है, वह सब छोड़ दो, स्वयं का ज्ञान प्राप्त हो जाएगा।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या भागवत कथा करवाने से पितरों को मुक्ति मिलती है? (P18-0069)**

अगर मुक्ति मिलती है, तो उनके रहते ही करवा दो ना — जाने के बाद क्यों?

**प्रश्न: गुरु जी, हम अपनी परेशानी, अभाव और आवश्यकता के लिए ज्योतिष की शरण में जाते हैं और बताए उपाय करते हैं, लेकिन सुधार नहीं होता — क्या करें?**

(P18-0070)

जाते क्यों हो? मेहनत से काम करो।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या अगले कर्म और पिछले कर्म होते हैं? और क्या ईमानदारी और नाम जप से प्रेम में रोमांचित होने से पिछले कर्म भस्म हो जाते हैं? (P18-0071)**

पिछला कुछ तो है जो मिल रहा है, और आगे हम तैयार कर रहे हैं। अगर बेईमानी कर रहे हैं तो आगे तैयार कर रहे हैं; ईमानदारी से जी रहे हैं तो पिछला समाप्त हो रहा है; सत्कर्म कर रहे हैं तो हम निर्विकार हो रहे हैं — बस यही जिंदगी है। नाम जप और रोमांच से कर्म भस्म होते हैं, यह कुछ कहा नहीं जा सकता — मूल है ईमानदारी और सत्कर्म।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या स्वरूप में स्थित होना ही आत्म-साक्षात्कार है? (P18-0072)**

स्वरूप एक रूप है; बाहर हम अनेक रूपों में फंस चुके हैं। बाहर के रूपों से अपने आप को छुड़ाकर स्वरूप में स्थिर हो जाना आत्मज्ञान है, और इस रूप से भी मुक्त हो जाना ब्रह्मज्ञान है — यही यात्रा है।

**प्रश्न: गुरु जी, ध्यान विधि करने से काम वासना बहुत बढ़ गई है — इसे नियंत्रित कैसे करें? (P18-0073)**

काम भाव और काम वासना तब समस्या बनते हैं जब आप बेईमानी से करते हो। काम भाव आए, और अगर आपके पास (उचित साथी) है, तो ईमानदारी से करो, नहीं तो छोड़ दो — बस इतनी सी बात है।

**प्रश्न: गुरु जी, मेरा बच्चा अकेलेपन से परेशान है — उसे अकेलेपन से कैसे बचाएं? (P18-0074)**

पहले देखिए उसकी उम्र क्या है। अगर वह छोटा है, तो उसे शिक्षा दीजिए और समय दीजिए — पिताजी समय दें, परिवार समय दे। और अगर बड़ा हो गया है, तो आपको भी पता है — उसका विवाह करवा दीजिए।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या आत्मज्ञान के बाद राग-द्वेष और कामना मिट जाते हैं? (P18-0075)**  
उल्टा है — राग-द्वेष से मुक्त होने के बाद आत्मज्ञान होता है।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या आत्मज्ञान होने के बाद शरीर के कष्ट का अनुभव होता है? (P18-0076)**

कष्ट शरीर को होता है; वह (आत्मज्ञानी) उसे देखता है।

**प्रश्न: गुरु जी, जब तक प्रत्यक्ष गुरु न मिले, क्या हम शिव जी को या अपने आराध्य को गुरु मान सकते हैं? (P18-0077)**

गुरु तो जीवंत चाहिए — मार्ग बताने वाला जीवंत चाहिए। खोज करते रहिए, मानकर मत बैठिए। (बाद में इसी सत्संग में किसी ने पूछा कि शिव जी को गुरु माना तो जीवन भर जपने का मंत्र कैसे मिलेगा — उत्तर: यह शिव जी से ही पूछ लीजिए; वे बोलें कि मुझे गुरु मानो तो मान लेना, मंत्र भी वही दे देंगे। शिव जी की बातें हमसे पूछोगे तो हम कैसे बताएंगे।)

**प्रश्न: गुरु जी, 25 तत्वों वाली प्रकृति क्या जड़ है? जड़ और चेतन क्या हैं?**

(P18-0078)

जड़ हम उसे बोलते हैं जो अपने आप से चल, बोल, उठ नहीं सकती; चेतन उसे कहते हैं जो अपने आप से चल-बोल सकती है। लेकिन ज्ञान की स्थिति में जड़ में भी चेतन है।

**प्रश्न: गुरु जी, ब्रह्म अवस्था क्या होती है? (P18-0079)**

इस पिंड (शरीर) से पूरी तरह मुक्त हो जाना ब्रह्म अवस्था है।

**प्रश्न: गुरु जी, हम अपने जीवन में इतना झूठ क्यों बोलते हैं और इस आदत को कैसे बदलें? सच बोलें तो सामने वाले को कड़वा लगता है। (P18-0080)**

सच तो मीठा होता है, कड़वा तो झूठ होता है। किसी से कहिए "मैं आपसे झूठ बोल रहा हूँ", तो वह तुरंत नाराज हो जाएगा; और कहिए "मैं जो कह रहा हूँ वह सच है", तो वह खुश हो जाएगा। नाराजगी झूठ से होती है; सच जैसा मीठा कुछ भी नहीं। ईमानदारी में मिठास होती है — आप भी प्रसन्न रहते हो और लोग भी; बेईमानी में कड़वाहट होती है — आप भी दुखी, समाज भी दुखी।

**प्रश्न: गुरु जी, आपके आश्रम (कुटिया) में महिलाओं और साधकों के लिए क्या नियम हैं? (P18-0081)**

साधक हो या साधिका, सबके लिए एक ही नियम है — नियमों पर सत्संग भी किया है, वह देख लीजिए। न नशे में आना है, न नशा करना है। भोजन और रहने की व्यवस्था निशुल्क है — सुबह काढ़ा, 12 बजे के बाद नाश्ता और शाम को भोजन मिलता है। मोबाइल जमा हो जाता है, व्यावहारिक बातें नहीं करनी हैं। एक दिन से लेकर आजीवन रह सकते हैं; कुटिया से जितना दायरा बताया जाए उसके बाहर नहीं जाना, और यहां के नियमों का पूरी तरह पालन करना है।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या भगवान और देवी-देवता हमारे आत्मिक कल्याण में सहायक हैं? अगर हैं तो कैसी पूजा करें और क्या मांगें? (P18-0082)**

कुछ नहीं चाहिए — यह मांगो। अगर आप किसी को इष्ट बना रहे हैं, तो निर्विकार होने के लिए प्रार्थना करिए।

**प्रश्न: गुरु जी, हमें आत्मज्ञान हुआ, यह कैसे पता चलेगा? (P18-0083)**

जैसे भोजन करते हो, तो लाने वाले को बाद में, खाने वाले को पहले पता चलता है। आप अज्ञान में हो, यह किस पता चला? आपको ही पता चलता है — वैसे ही आत्मज्ञान होगा तो आपको ही पता चलेगा।

**प्रश्न: गुरु जी, आत्मा प्रकाश रूप में हमेशा के लिए कब होती है? (P18-0084)**

जब आप अपने आप को इच्छा और अपेक्षा से मुक्त कराके "कुछ नहीं चाहिए" में स्थिर हो गए, उसके बाद।

**प्रश्न: गुरु जी, कुटिया में एक महीना रहकर घर लौटे; एक दिन अच्छा लगा, फिर व्यवहार में प्रतिक्रिया न देने से घुटन होने लगी — क्या संसार में रहना ही बेईमानी है? (P18-0085)**

कुटिया का पता है, जिस रास्ते से गए हो वही रास्ता वापस आता है — आ जाइए। संसार में उचित लगे तो संसार में रहिए — जहां आप खुश रहें, जहां आपका आत्मिक कल्याण हो, वहां रहिए। चाहे जहां रहो, आपकी स्वतंत्रता है; बस इतना ध्यान दो कि मैं यहां हूं और मेरा आत्मिक स्तर उठ रहा है। अगर ऐसी जगह रहना पड़े जहां दबाव हो, संकोच हो और आत्मिक स्तर गिर रहा हो, तो उस स्थान और उस व्यक्ति का तुरंत त्याग कर देना चाहिए — चाहे सामने कोई भी हो, अपना हो या पराया।

## प्रश्न: गुरु जी, मैं अपना ध्यान कैसे लगाऊं और कैसे पहचानूं कि मैं कौन हूं?

(P18-0086)

हर व्यक्ति को पता है कि वर्तमान में मैं कौन हूं। अगर उस स्थिति में जीना चाहते हो तो ठीक है, नहीं तो कहिए कि मैं इस स्थिति से निकलना चाहता हूं, मुझे मार्ग बताओ — और उसके लिए काम करो। किसी से जाकर पूछो "मेरी जेब में कितने पैसे हैं", तो वह हंसेगा। जैसे सड़क पर गिर जाओ और "मैं कौन हूं, मैं कौन हूं" कहते रहो, तो कोई नहीं उठाएगा; सच बोलना पड़ेगा कि मैं गिर गया हूं, मुझे उठाकर सहायता करो — तब वह जरूर मदद करेगा। सीधी अपनी परेशानी बताओ — मेरा जीवन अशांत है, इससे मुक्त होने का मार्ग बताओ; कई लोगों ने फंसाया है, अब मैं निकलना चाहता हूं। "मैं कौन हूं" प्रश्न को बहुत तूल दे दिया गया है; यह पूछकर आप असल में बताना चाहते हो कि मैं आध्यात्मिक हूं। आप कौन हो, यह आपसे ज्यादा अच्छा दुनिया में कोई नहीं बता सकता।

## प्रश्न: गुरु जी, मन भटकता रहता है — क्या कल्पना करना और फिर उस कल्पना को बार-बार देखकर सही निर्णय लेना ही ध्यान है? (P18-0087)

मन नहीं भटकाता, आपकी जरूरत भटकाती है — यही समझना है। क्या मोबाइल या कंप्यूटर ने कभी कहा कि यह वीडियो देखो? आप जहां-जहां ले जाते हो, वह खोल देता है। मन आपकी जरूरत को इंगित करता है; मन शरीर के लिए काम करता है, आपके लिए नहीं। एक ध्यान तो स्वतः घटित हो रहा है — यह बाहर का ध्यान है, इससे मुक्त होना है। जब आप "चाहिए" में या "अपने तरीके से चाहिए" में कुछ कर रहे हो, तो ध्यान बाहर अनेक वस्तुओं और लोगों पर जाता है — देखो क्यों जा रहा है, क्या चाहिए, लेकर क्या करोगे, जीवन में उसका सदुपयोग है या दुरुपयोग; उचित है तो लो, अनुचित है तो त्याग करो — यह ध्यान में ध्यान है। यह करते-करते जिस दिन राग-द्वेष से अपने आप को छुड़ा लोगे, उस दिन करने वाला ध्यान भी खत्म, करने वाला भी खत्म, जिसे चाहिए वह भी खत्म — आप "कुछ नहीं चाहिए" में आ जाओगे। तब अंदर से प्रेम पैदा होगा, अलगाव खत्म होगा, आप विराट स्वरूप के साथ हो जाओगे; फिर सत्य तक पहुंचोगे, उसके बाद आत्मज्ञान होगा, और आत्मज्ञान के बाद परम ध्यान घटित होगा — इसे एकाकार होना कहते हैं। और सत्संग कभी रिपीट नहीं होता — दोबारा कहूं तो अलग शब्दों और अलग भाव से आएगा — इसलिए इसमें पूरी तरह होकर सुनना चाहिए।

**प्रश्न: गुरु जी, ध्यान में ध्यान करते हुए क्या करना है, परम ध्यान में क्या करना है, और साधना में परीक्षा कब होती है? (P18-0088)**

ध्यान तो प्राकृतिक रूप से घटित हो रहा है; उसमें सूक्ष्मता से देखना है कि हो क्या रहा है — उचित-अनुचित, अच्छा-बुरा, उसमें आप हो, और उनसे अपने आप को छुड़ाना पड़ेगा। परम ध्यान में कुछ नहीं करना, वह तो एकाकार हो गया, अपने आप घटता है — बस मिलन का इंतजार करना है। परीक्षाएं तो शुरुआत से ही आने लगती हैं; फाइनल परीक्षा "कुछ नहीं चाहिए" के बाद अवधूत स्थिति में होती है।

**प्रश्न: गुरु जी, किसी ने अपनी बात अधूरी या इधर-उधर कह दी तो आप उसे पूरा करके साफ कर देते हैं — गुरु का कर्तव्य क्या होता है? (P18-0089)**

संशय नहीं रहना चाहिए। किसी ने अपनी बात रखी, भाव रखा, चाहे ठीक से कह पाए या नहीं — मेरा कर्तव्य है उसे उचित तरीके से आगे बढ़ा देना कि वह क्या कहना चाहते थे। जैसे बच्चा चलते हुए फिसल जाए तो मां-बाप तुरंत उठाकर मिट्टी साफ करते हैं और फिर चलाते हैं, वैसे ही गुरु का कर्तव्य है सामने वाले की बात सुनना और उसे सही दिशा में ले जाना। गुरु कभी खंडन नहीं करता, सबकी सुनता है, और गिरने पर भी कहता है कोई बात नहीं, इससे मजबूत होगा। गुरु वही है जो बोलने का पूरा मौका देता है — जैसे मां के लिए बच्चे के किसी शब्द का मतलब नहीं, फिर भी वह खूब बात करके उसे बोलना सिखाती है। आपके एक भी शब्द का मेरे जीवन में कोई मतलब नहीं, लेकिन आपको बोलना सिखाना है, आपका डर हटाना है, इसलिए मुझे आपको सुनना पड़ता है।

**प्रश्न: गुरु जी, भगवान कृष्ण गीता में जब यज्ञ की बात करते हैं, तो उसका क्या तात्पर्य है — क्या वे कर्मकांड वाले यज्ञ की बात कर रहे हैं? इसका आध्यात्मिक सत्य क्या है? (P18-0090)**

यज्ञ का मतलब है अपनी इंद्रियों की आहुति दे देना। इंद्रियां कहां फंसी हैं — स्वाद के चक्कर में; आपने उन्हें स्वाद का आदी बना दिया है, उस स्वाद की आहुति दे देना। भोजन करते हो तो जठराग्नि जलती है; जब उसे आग की जरूरत होती है तो वह बाहर से खींचती है — इसलिए गर्मी में भोजन करते हो तो पसीने से भर जाते हो और ठंड में कांपने लगते हो। इसलिए कम भोजन करिए — जठराग्नि भोजन को जल्दी पका देगी और जलती रहेगी, तो पश्चाताप की आग जलने लगेगी। इंद्रियों के पीछे कौन है, आप किसके लिए व्याकुल हो — जैसे पहले नशा नहीं करते थे तो उसकी याद नहीं आती थी, नशा शुरू किया तो याद आने लगी; भटकाने वाले आप ही हो। अपने स्वाद की आहुति दे देना — इस यज्ञ की बात हुई है।

**प्रश्न: गुरु जी, भक्त ही क्यों इतना परेशान होता है? (P18-0091)**

भक्त कभी परेशान नहीं होता, लालची भक्त परेशान होता है। अगर परेशान हो, तो कुछ चाहिए, तभी परेशान हो। भक्त वही होता है जिसे कुछ नहीं चाहिए — ऐसे भक्त को परेशान करने वाला दुनिया में कोई पैदा ही नहीं हुआ। जो परेशान है वह लालची है, भक्त नहीं — वह भगवान नहीं ढूंढ रहा, कुछ पाने के लिए भगवान ढूंढ रहा है; जिसे कुछ नहीं चाहिए, वह भगवान लेकर भी क्या करेगा?

**प्रश्न: गुरु जी, मैं आध्यात्मिक होना चाहता हूं — कृपया मार्गदर्शन करें। (P18-0092)**

बस अपनी बुराइयों का त्याग करिए।

**प्रश्न: गुरु जी, आत्मा शरीर के अंदर है या बाहर? क्या आत्मा ही परमात्मा है?**

(P18-0093)

आत्मा अंदर है या बाहर, यह बाद में देखेंगे — पहले यह पक्का करो कि आप कहां हो, अंदर हो या बाहर। हो सकता है आप न अंदर हो न बाहर, कहीं और घूम रहे हो। पहले अपनी स्थिति बताइए, तब बताया जाएगा कि कहां खोजना चाहिए।

**प्रश्न: गुरु जी, ध्यान करते वक्त मन में परेशानी और घबराहट होती है — मन इतने विचार क्यों देता है, और स्थिरता कैसे बने? (P18-0094)**

विचार वही आते हैं जो आपने अतीत में कर्म किए हैं — विचारों का आधार है, ऐसे ही विचार नहीं आते। स्थिरता के लिए बस इच्छा और अपेक्षा से अपने आप को मुक्त कराइए — सीधी सी बात है, उम्मीद छोड़ दो, बात खत्म।

**प्रश्न: गुरु जी, आप कहते हैं जो पाया है वह छोड़ दो — पर गृहस्थ जीवन में तो सब चाहिए, फिर क्या छोड़ें? और "चाहिए" वाले ध्यान से मुक्त हो गए तो दैनिक कार्य कैसे करेंगे? (P18-0095)**

योग्यता से ज्यादा जो चाहिए, बस वह छोड़ दो — इतना तो आप करो। जीने के लिए जो जरूरत है उसमें जियो; जरूरत से ज्यादा "चाहिए" का त्याग करो।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या हम बिना गुरु किए हनुमान चालीसा पढ़ सकते हैं, और "तुलसीदास सदा हरि चेरा" में तुलसीदास की जगह अपना नाम लगा सकते हैं? (P18-0096)**

तुलसीदास का नाम क्यों हटाना चाहते हो? अगर हटाना है तो पूरा हनुमान चालीसा हटाओ — एक हनुमान चालीसा खुद लिखो, उसका निर्माण करो और उसमें अपना नाम डालो, तब समझ में आ जाएगा। उनका नाम हटाकर अपना डालना तो अपने अहम को पोसना है — जाने दीजिए, छोड़ दीजिए।

**प्रश्न: गुरु जी, गांव वाले मेरी निंदा करते हैं — क्या इससे मेरे पाप कट जाएंगे? अपनी निंदा सुनना सही है या गलत? (P18-0097)**

निंदा सुनना न गलत है न सही — बस निंदा वाला काम मत करिए, सीधी सी बात है।

### **प्रश्न: गुरु जी, आत्मा, जीव और कर्म का संबंध कैसे है? (P18-0098)**

आत्मा इस पिंड में आई — उसे भी इस दुनिया को देखना और समझना था, और इसके लिए पांच तत्व का शरीर चाहिए था। शरीर स्वयं चेतन है — चेतन ही चेतन को चेतन करता है, मुर्दे से बच्चे पैदा नहीं होते; कोई अंग कट जाए तो कुछ देर उसमें हरकत रहती है। फिर "मेरा" और मान के चक्कर में आकर वह जीवात्मा हो गई — जैसे पानी फ्रिज में गया तो कुछ समय बाद बर्फ हो गया। कर्म पहले जरूरत में हुआ, बाद में लालच में आकर कर्ता का भाव बन गया। बस ऐसे ही संबंध बनता गया — पहले जरूरत में, फिर इच्छा-अपेक्षा में।

### **प्रश्न: गुरु जी, क्या मुक्ति संभव है, और वह कौन सी मुक्ति है? (P18-0099)**

तुरंत संभव है। ईमानदारी मुक्ति है, बेईमानी बंधन — यही पहली लाइन है; तुरंत पा सकते हो।

### **प्रश्न: गुरु जी, ऊर्जा कितने प्रकार की होती है? (P18-0100)**

एक सात्विक ऊर्जा है, जिसे परोपकार कहते हैं; और एक पॉजिटिव और नेगेटिव ऊर्जा है। जब आप इच्छा-अपेक्षा में काम करते हो, तब पॉजिटिव-नेगेटिव ऊर्जा आती है; जब इच्छा-अपेक्षा से मुक्त होकर काम करते हो, तो वह सात्विक ऊर्जा है। सात्विक ऊर्जा परोपकार और निष्काम सेवा से जागृत होती है और निर्विकार होने में सहायता देती है। पॉजिटिव-नेगेटिव बाहर की ऊर्जा है — यह आपको बाहर से प्रभावशाली बनाती है, प्रभाव देने-लेने में ले जाती है और संसार में घुमाती है। सबकी अपनी-अपनी ऊर्जा और बल होता है — धन का बल, तन का बल, ज्ञान का बल और समझ का स्तर आपको आपके कर्म से मिला है।

### **प्रश्न: गुरु जी, क्या प्रार्थना में ताकत होती है? कर्म करते हुए अच्छे मन से की हुई प्रार्थना फलित होती है? (P18-0101)**

देखना पड़ेगा कि आप किस लेवल पर हो और आपका पावर क्या है — जैसे साइन (हस्ताक्षर) का अधिकार काम करता है, वैसे ही प्रार्थना काम करती है। एकदम नीचे के लेवल पर होकर प्रार्थना करो कि कल मुझे राजा बना दो, तो क्या ऐसा होगा? पर राजा का बालक कहे तो बन ही जाएगा। आपका बैकग्राउंड क्या है, प्रार्थना क्या कर रहे हो, प्रार्थना के पीछे कौन है, पीछे क्या चाहिए, और आपकी योग्यता है या नहीं — यह सब देखना पड़ेगा।

**प्रश्न: गुरु जी, साधना का सरल मार्ग क्या है? (P18-0102)**

अपने आप को सुधारना — सुधारना ही साधना है।

**प्रश्न: गुरु जी, मन अशांत है, सिर्फ गलत विचार आते हैं — क्या करें? (P18-0103)**

अशांति वाला काम मत करो। अगर मन अशांत है, तो वह काम छोड़ दो — देखो आप क्या कर रहे हो और आपकी स्थिति क्या है।

**प्रश्न: गुरु जी, चेतन, चेतना और चैतन्य क्या हैं? (P18-0104)**

चेतना का मतलब है समझ — "चेतना बढ़ाओ" यानी अपनी समझ बढ़ाओ। चैतन्य मतलब ज्ञान की स्थिति, आत्म स्थिति। और चेतन शरीर है।

**प्रश्न: गुरु जी, आदत नहीं छूटती — जानते हुए भी गलत काम करते हैं, क्या करें? (P18-0105)**

छोड़नी पड़ेगी, नहीं तो गलत काम के परिणाम के लिए तैयार रहो।

**प्रश्न: गुरु जी, आत्मा कहां से आई? (P18-0106)**

आप खुद अपने आप से पूछ लो कि आप कहां से आए। क्या आत्मा और आप अलग-अलग हो? अगर अलग हो, तो आत्मा की इतनी फिक्र क्यों है — अपनी फिक्र करो। पहले यह खोज करो कि आप कहां से आए, आपका जन्म कहां से हुआ। आत्मा को छोड़ दो; जब जरूरत होगी, वह खुद बता देगी कि मैं कहां से आई।

**प्रश्न: गुरु जी, मैं मन के विचारों से परेशान हूं, मुझे मन से मुक्ति चाहिए। (P18-0107)**

देखिए, जब आपको कुछ चाहिए, तब मन काम करता है — मन बहुत सहायक है। पहले मन को पूरी तरह समझ लो; जब समझ लो, तो कभी नहीं कहोगे कि मुझे मन से मुक्ति चाहिए।

**प्रश्न: गुरु जी, इस युग में जीवन का लक्ष्य कैसे चुनें? क्या अपनी इच्छाओं की पूर्ति करना गलत है? क्या भगवद गीता में कहे नियम में जीने से मोक्ष मिल सकता है?**

(P18-0108)

ईमानदारी, सत्कर्म, और योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा का त्याग करें — आप आगे बढ़ जाएंगे। जितनी आपको जरूरत है, अगर वह पूरी कर रहे हैं और किसी को तकलीफ नहीं हो रही, तब ठीक है; लेकिन आपकी जरूरत पूरी करने से किसी को कष्ट आ रहा है, तो वह गलत है। जीवन का लक्ष्य — यह आप ही को तय करना पड़ेगा।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या अंतर्मन से कोई आवाज आती है जो बताए कि सही क्या है और गलत क्या — क्या यह आत्मज्ञान के बाद संभव है? (P18-0109)**

सही क्या है, यह जानकारी से पता चलेगा, तभी आप उसे समझ पाएंगे। जैसे छोटा बालक खाने की चीज समझकर सांप हाथ में उठा लेता है — उसे पता नहीं, जानकारी नहीं। शरीर से बड़ा हो गया पर मन-बुद्धि में जानकारी नहीं, तो बड़ा भी उठा लेता है। जानकारी का अभाव है तो गलती करोगे — जानकारी लो और उचित तरीके से जीवन जियो।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या सांसारिक पढ़ाई करना साधना मार्ग में सहयोगी है? (P18-0110)**

पढ़ाई और शिक्षा तो लेनी ही चाहिए।

**प्रश्न: गुरु जी, जब हम खोजी बनकर आध्यात्मिक मार्ग पर निकल जाते हैं, तो पत्नी-बच्चे जैसे अपने प्रेम वाले लोगों को दर्द होता है — क्या यह स्वार्थ (सेल्फिशनेस) नहीं है? क्या कोई और तरीका है? (P18-0111)**

अध्यात्म का मतलब है अपने आप को सुधारना और सुधार कर स्वयं का आत्मदर्शन करना। अब देखना यह है कि आप किस स्थिति में घर छोड़ते हो। स्थितियां दो होती हैं — एक अपने कल्याण के लिए, एक समाज कल्याण के लिए। अगर समाज कल्याण के लिए निकलते हो तो आपको दोष नहीं लगता, और अपने कल्याण के लिए निकलते हो तो दोष लगता है। दुख तो परिवार को पहुंचेगा, लेकिन धर्म कहता है — शरीर बचाने के लिए हाथ देना पड़े तो दे दो, परिवार बचाने के लिए एक सदस्य, गांव के लिए एक घर, देश के लिए एक राज्य, विश्व के लिए एक देश हटाना पड़े तो हटा दो। आप किसके लिए निकल रहे हो, यह मायने रखता है। बस अपने कल्याण के लिए निकलना है तो वहीं रहकर करो, उनको साथ लेकर चलो; जगत कल्याण के लिए निकल रहे हो तो निकलो। मैंने यह खुद अपनाया — युवा होने पर देखा कि शादी करूं तो पत्नी, बच्चे, बंगले, कारें, और कुछ लोग इस शरीर का उपयोग करेंगे, जिंदगी खत्म; शरीर तो हर स्थिति में जाना है, तो क्यों ना समाज इसका उपयोग कर ले।

**प्रश्न: गुरु जी, जिस भाव से हम मार्ग पर निकले थे, क्या वह बाद में बदल सकता है? अगर काम हमेशा उस भाव के अनुसार नहीं हो पाता तो क्या होता है? (P18-0112)**

बाद में भाव बदलता नहीं, यही तो बात है। जब आप निकलते हो, वह भाव आखिरी तक पीछा नहीं छोड़ेगा — यह ध्यान रखना। अगर वह भाव अंतरात्मा से उठा है, आपने बनाया नहीं, तो वह जाने वाला नहीं। काम उस भाव के अनुसार न हो तो वह भाव बीच-बीच में चोट करता रहता है, और चोट करते-करते आपको लाकर वहीं खड़ा कर देता है, फिर आपको वहीं करना ही पड़ेगा। जिस भाव से आप निकले थे वो मायने रखता है — अभाव में निकले, कुभाव में निकले या स्वभाव में। हम इस मार्ग में स्वभाव में निकले थे, शौक से; आंतरिक रूप से संपन्न थे। हर हाल में शरीर छोड़कर जाना है — अपने लिए जियो या समाज के लिए — तो जब जाना ही है तो अच्छे तरीके से उपयोग हो जाओ।

**प्रश्न: गुरु जी, काम में (बॉस या गुरु के रोल में) कई बार ईगो धारण करनी पड़ती है; सालों तक धारण करते-करते वह स्वभाव बन जाती है। रोल भी निभाना है और वह स्वभाव भी न बने — यह कैसे करें? (P18-0113)**

पहले उन्हें काम में डांटें, और जब काम हो जाए तो उनके पास बैठकर बालक की तरह प्यार से समझाएं — कि इसमें तुम्हारा हित होगा, मैं नहीं चाहता तुम्हारा अहित हो, मैं चाहता हूं तुम आगे बढ़ो, उन्नति करो; अगर तुम गलती करोगे तो मैं बर्दाश्त नहीं करूंगा, क्योंकि मैं तुम्हें ऊपर उठते देखना चाहता हूं, नीचे नहीं। फिर वे आपकी डांट पर मुस्कुराएं, और उनके अंदर आपके प्रति कुछ होगा तो वह निकल जाएगा। इससे वह ईगो आपके स्वभाव का भाग नहीं बनेगी और आप पर हावी नहीं होगी।

**प्रश्न: गुरु जी, आप कहते हैं भाव आखिरी तक रहता है, लेकिन जो भाव बनते-मिटते रहते हैं, उन्हें क्या कहेंगे? (P18-0114)**

वो तो इच्छा और अपेक्षा में बनते-मिटते हैं। लेकिन इच्छा-अपेक्षा से परे भी भाव है — स्वभाव, आत्मिक भाव — कि आप किस लिए निकले। जो इच्छा-अपेक्षा में उठेंगे वो मिट जाएंगे, लेकिन जिस कारण से आप अध्यात्म की तरफ आगे बढ़े हो, वह भाव नहीं मिटता। (क्या यह भाव बाकी प्राणियों में भी होता है? — उसका नहीं बोल सकते, क्योंकि सिद्ध कैसे किया जाए; इतना पक्का है कि मानव में होता है।)

**प्रश्न: गुरु जी, यह जांचने के लिए कि मैं किस भाव से जा रहा हूं, बहुत गहराई में उतरना पड़ता है और कुछ समय बाद दिमाग की क्षमता खत्म हो जाती है — तो कैसे पता करें? (P18-0115)**

जब आप निकलोगे तो पता रहेगा कि मैं किस कमी से निकल रहा हूं या किसलिए निकल रहा हूं — उस समय जांचना भी नहीं पड़ेगा। और वह कभी भूल भी नहीं पाओगे — जैसे व्यक्ति को कहां-कहां रहा याद हो या न हो, जन्मभूमि नहीं भूलता। आप दुकान पर जाते हो तो पता है किस लिए जा रहे हो; आगे तभी बढ़ो जब पता हो कहां और किस लिए जाना है। कभी भी अभाव-कुभाव में मत निकलना; उस अभाव-कुभाव को दूर करना और फिर संपन्न होकर निकलना। जीत के आगे बढ़ना, हार के नहीं — हार के बढ़े तो सारी जिंदगी जीतने पर लगोगे, और शेर को सवा शेर मिलता ही है।

**प्रश्न: गुरु जी, स्वभाव का मतलब क्या स्वयं को जानने की जिज्ञासा है? और जिन पर जिम्मेदारियां हैं, वे क्या करें — जिम्मेदारी निभाने में ही अड़चन आती है?**

(P18-0116)

हां, स्वभाव का मतलब स्वयं को जानना, ज्ञान को उपलब्ध होना है। अब देखना है पीछे जवाबदारी है या नहीं — मैं परिवार में सबसे छोटा था, विवाह नहीं किया, तो मुझ पर कभी जिम्मेदारी आई ही नहीं। जिन पर जिम्मेदारी है वे जिम्मेदारी निभाते हुए उस तक पहुंच सकते हैं — मार्ग भी ऐसा मिल रहा है। अड़चन तो आएगी, परीक्षा होगी — तो ईमानदारी से निभाओ। जिम्मेदारी को निभाना ही है तो ईमानदारी से निभाने में क्या जाता है? कोई आज तक आपका दरवाजा खटखटाकर नहीं कहता कि आपको बेईमानी करनी है।

**प्रश्न: गुरु जी, अगर सामने वाला (अपना ही) हमसे उतनी अपेक्षा रखता है जितना हम ईमानदारी से नहीं दे सकते, और बेईमानी करने के लिए मजबूर करता है, तो क्या करें? (P18-0117)**

आप बोल दो — आपकी अपेक्षा इतनी है, लेकिन मैं इतना दे सकता हूं, इससे ज्यादा नहीं। फिर भी वह ज्यादा की अपेक्षा रखता है तो ऐसे व्यक्ति का त्याग कर दो — त्याग ही परम सुख है। नाखून गड़ने लगे तो कटवा देते हैं, उंगली सड़ने लगे तो हटवा देते हैं; ऐसे रिश्तों का त्याग कर दो जो आपको गंदा कर रहे हैं। इसमें कोई दोष नहीं। दोष तब होता जब वो ईमानदार होते, आप बेईमान होते और छोड़ते — बेईमानों को छोड़ना दोष नहीं है। अगर कोई आपको बेईमानी पर मजबूर कर रहा है तो वह अपना हो ही नहीं सकता। अगर वह अनजान है तो उसे बताइए, समझाइए कि अपनी गलती देख लेना — आगे उसकी मर्जी।

**प्रश्न: गुरु जी, कभी-कभी छोटा बड़े को समझाए तो बड़े को छोटे की बात समझ नहीं आती — तो छोटा होकर बड़े को कैसे समझाएं? (P18-0118)**

आप समझाओ मत, अपनी बात रख दो। एक घटना — मैं गुजरात में फटे कपड़ों में एक आश्रम गया; महाराज जी गद्दी पर बैठकर सत्संग कर रहे थे, पर उस गद्दी के लायक नहीं थे। उन्होंने कहा "स्वर सत्य है" और सबने हां में हां मिला दी। मैंने हाथ जोड़कर पूछा — महाराज जी, स्वर सत्य है कि स्वर लेने वाला? दोनों एक हैं या अलग? अंत में उन्होंने कहा, स्वर लेने वाला सत्य है। मैं यह भी कह सकता था कि आप गलत बोल रहे हैं, सिद्ध कर देते, लेकिन जिस गद्दी पर वे बैठे थे उसका भी एक सम्मान था — तो पूछ के बताया, उनको भी समझा दिया, भक्तों को भी। (अगले दिन उन्होंने कहलवा दिया कि मैं बीमार हूँ।) बताने का भी एक तरीका होता है — बड़े को समझाओ तो छोटा बनकर समझाओ, बड़ा बनकर क्यों?

**प्रश्न: गुरु जी, कभी सामने वाले के मन में यह होता है कि "मुझसे छोटा मुझे ज्ञान दे?" — और अगर हमारे आसपास सब अपने ही ऐसे हों, तो क्या करें? (P18-0119)**

तो ऐसे लोगों को छोड़ दो, ऐसे लोगों का त्याग कर दो — त्याग ही परम सुख है। ऐसे लोगों के लिए बात ही क्यों रख रहे हो? और अगर वे सब अपने ही हैं, सब ऐसे ही हैं, तो या तो सबका त्याग कर दो, या फिर झेलो और पड़े रहो उसमें — ऐसे सबके बीच में क्यों रह रहे हो?

**प्रश्न: गुरु जी, मुझे पहले आत्मज्ञान जैसा अनुभव होता था — प्रश्न उठते ही अंदर से उत्तर मिल जाता था — लेकिन यहां (कुटिया) आने के बाद वह अनुभव खत्म हो गया; ध्यान में भी नहीं मिलता। वह कहाँ चला गया? (P18-0120)**

मैं क्या कहता हूँ — कुछ नहीं चाहिए मैं आ जाओ। यहां रहने का मतलब है खत्म हो जाना; यहां सिर्फ तुम ही बचोगे, और कुछ नहीं बचेगा। अगर कुछ बचाना है तो यहां से निकल लो — इसीलिए मैं किसी को रोकता नहीं, कोई बचाकर भी जा सकता है। एक साधक दक्षिण से आया था, बोला "मैं तो खत्म हो जाऊंगा", तो मैंने कहा यह बात मैं पहले ही कह चुका; उसे नाश्ता कराकर विदा किया। इसीलिए लिखा है — बेमतलब से आना नहीं, मतलब है तो आना नहीं। यहां आंतरिक व्यक्ति खत्म हो जाता है; जितना कचरा था सब निकल जाता है — जैसे कोरा कागज।

**प्रश्न: गुरु जी, जब आत्मा इच्छा-अपेक्षा में जीव बनी और उसे पता है कि मूल तक पहुंचना है, तो फिर भी वह अपने आप को बचाकर क्यों रखना चाहती है — अपना नाश क्यों नहीं करना चाहती? (P18-0121)**

क्योंकि यह (बनाया हुआ) अस्तित्व प्रत्यक्ष है, और आत्मा का अस्तित्व अप्रत्यक्ष हो गया है। सत्य अप्रत्यक्ष हो गया है, सच-झूठ प्रत्यक्ष है। अगर वह प्रत्यक्ष हो जाए तो वह तुरंत उसे पकड़कर इसे छोड़ देगा, लेकिन उसे डर है — मिटने के बाद मैं न रहा तो क्या होगा। यह पकड़े हो तो वह गया; यह छोड़ोगे तो वह आएगा। जिस अस्तित्व को इतनी मेहनत से बनाया, उसे मिटा नहीं पा रहा, क्योंकि मूल अस्तित्व की उसे सिर्फ जानकारी है, पता नहीं — मूल उसके लिए एक भ्रम बन गया है, हो भी सकता है नहीं भी। जैसे कोई कहे एक लाख दे दो, एक करोड़ लौटा दूंगा — हाथ में अभी एक है, वह देगा या नहीं, पता थोड़ी है। जब समर्पण हो जाएगा, तब होगा — इतनी आसानी से यह नहीं मिटता।

**प्रश्न: गुरु जी, अगर किसी को ना कहना हो और उसकी भावनाओं को ठेस पहुंचाने का दुख हो (क्योंकि हम उससे प्यार करते हैं), तो ईमानदारी से जीते हुए ना कैसे कहें? (P18-0122)**

अगर ईमानदारी से जीना है तो ना कहना है तो ना ही कह दो। क्योंकि हां कहने में आपका भी भटकाव है और आप उनके साथ भी धोखा कर रहे हो — उनके लिए धोखेबाज तो मत बनो। कभी जीवन में उन्हें समझ आएगा तो बोलेंगे कि वह व्यक्ति सही था। हां, ना एक मर्यादा में कहें — संबोधन में मर्यादा हो, कहने का एक तरीका होना चाहिए।

**प्रश्न: गुरु जी, आपके अंदर प्रेम है तो आप किसी को मना नहीं करते, अपने भोजन का समय भी दे देते हैं — अगर आपको अपने किसी प्रिय साधक को ना कहना हो तो कैसे कहेंगे? (P18-0123)**

मैं तो ना नहीं कह पाता; ना में तो मैं जीता ही नहीं — शरीर गिर सकता है, बस इससे ज्यादा नहीं। जब तक किसी की जिज्ञासा है, तब तक मैं उसे ना नहीं कह सकता। हां, अगर वह ऐसी बातें कर रहा है जिनका उसके जीवन में कोई मतलब नहीं, तो फिर मैं ऐसी बातें कहूंगा कि वह खुद ना कहेगा और चला जाएगा।

## **प्रश्न: गुरु जी, वह पत्थर वाली घटना क्या थी — क्या पत्थरों में भी चेतना होती है?**

(P18-0124)

मैं नर्मदा तट पर स्नान करने गया; एक पत्थर पैर से टकराया — पत्थर तो बहुत टकराते हैं, पर उसका टकराना मुझे एहसास हुआ। फिर आवाज आई, "मुझे मुक्त करो।" स्नान के बाद मैंने डूबकर उसे ढूँढा, निकाला — उस पत्थर में धागे बने थे — फिर उसे छोड़कर फेंका तो एहसास हुआ कि मैंने उसे मुक्त कर दिया। हां, किसी तरीके का चित्त इन पत्थरों में भी है; जड़ में भी चेतना है, ये भी आपसे बात कर सकते हैं, लेकिन आप उस लेवल पर हों तब।

## **प्रश्न: गुरु जी, आपने एक महाराज जी को एक साल में आत्मज्ञान करवाने की बात कहकर 12 दिन का निर्जल व्रत दिया था — वह अद्भुत घटना क्या थी? (P18-0125)**

वे आत्मज्ञान के लिए बहुत व्याकुल थे, कहते थे मैं कुछ भी कर सकता हूँ, मर भी सकता हूँ। मैंने कहा — सोच-समझकर फैसला लो, मैं जो बोलूंगा वही करना है, अभी भी पीछे हट सकते हो। उन्होंने हां कहा तो 12 दिन का निर्जल व्रत (बिना पानी) दिया। चार-पांच दिन बाद वे बार-बार नहाने लगे, पानी में रुकने लगे, तो मैंने रोका। उन्हें नहीं पता था, पर मुझे पता था — एक साल में आत्मज्ञान भी करवाना है और इन्हें जीवित भी रखना है, दोनों मेरी जिम्मेदारी थी, चाहे मुझे जाना पड़े। मैंने उन्हें संशय में रखा था। सातवें दिन के आसपास रात को मैं आंखें बंद किए लेटा था, तब उनकी जीवात्मा (सूक्ष्म शरीर) नींद में निकलकर मेरे पास आई और गिड़गिड़ाने लगी — "मुझे बचा लो।" मैंने उसे बंद आंखों से प्रत्यक्ष देखा, रोंगटे खड़े हो गए; आंख खोली तो वह चली गई। फिर उन्होंने पूछा "पानी पी लूं?" — मैंने कहा यह आपके ऊपर है; पी लिया तो बात खत्म, साधना में जी भी सकते हो मर भी सकते हो। उन्हें जीना था, तो उन्होंने आठवें दिन पानी पी लिया।

**प्रश्न: गुरु जी, आपने अपने गुरु से पूछा था कि 41 दिन में क्या मैं जीवित भी रहूंगा — तो क्या उन महाराज जी को भी आपसे यही पूछना चाहिए था? क्या कोई आत्मज्ञान का समय दे सकता है? (P18-0126)**

हां, उन्हें पूछना चाहिए था; हमने तो साफ कहा था कुछ भी हो सकता है। वे खुद बोले थे कि आत्मज्ञान के लिए मर सकता हूं — और मुझे आत्मज्ञान जीते-जी चाहिए था, समझ भी चाहिए। वे बस आवेश में बोल रहे थे; वह संयोग उनके लिए निकल गया था। अब कोई बोले तो मैं नहीं बोल सकता — आत्मज्ञान कोई किसी को करवा नहीं सकता। रास्ता बता सकते हैं, पर कोई समय नहीं दे सकता कि कितने दिन में होगा। मुझे तो अपने जीवन की घटनाओं से पहले से मालूम था कि आत्मज्ञान हो जाएगा — मैं पक्का करके निकला था; मैंने संशय में कभी यात्रा ही नहीं की। संशय है तो आगे क्यों जाना, समय बर्बाद क्यों करना। (41 दिन बेमतलब पागल की तरह बैठूं और फिर कहा जाए तूने मन से नहीं बैठा — इसलिए पहले ही पूछ लिया था।)

**प्रश्न: गुरु जी, आप सालों से लोगों के प्रश्नों के उत्तर दे रहे हैं और एक ही प्रश्न हजारों बार आता होगा — क्या आपको गुस्सा या इरिटेशन नहीं होती? हमें तो तीन बार कोई एक बात पूछे तो झुंझलाहट होती है। (P18-0127)**

हजारों बार प्रश्न आए तो हजारों पूछने वाले अलग-अलग तरीके से पूछे, हजारों लोग अलग-अलग स्थिति में थे, तो हजारों लोगों के लिए हजारों तरीके से जवाब निकले, एक तरीके से नहीं। वह इतनी बार पूछे — मेरा काम है कि आपका स्तर कैसे ऊपर उठ जाए, बस। (साथी ने समझाया: प्रेम कोई क्रिया नहीं, एक स्थिति है; जहां बदले में किसी से कुछ नहीं चाहिए, वहीं सच्चा प्रेम है, और वहां झुंझलाहट जैसे भाव नहीं आते — वे झूठे प्रेम से आते हैं।)

**प्रश्न: गुरु जी, आपकी और हमारी मनःस्थिति अब बहुत अलग है — जैसे नदी को क्या पता सूखा कैसा लगता है। क्या आप कभी हमारी जैसी स्थिति में थे, और क्या वह याद है? क्या आप हमारी स्थिति को महसूस कर सकते हैं? (P18-0128)**

हां, अभी भी याद है, तभी तो जवाब दे रहे हैं — उससे मैं भी आया हूं, पूरी तरह और अच्छे तरीके से याद है। जब मैंने प्रश्न पूछे थे तो मेरे साथ बहुत दुर्व्यवहार हुआ, अपमान हुआ। उसी समय मैंने पक्का किया था कि जिस दिन मुझे ज्ञान होगा, मैं घूम-घूमकर बांटूंगा — लोग मुझे नहीं ढूंढेंगे, मैं लोगों को ढूंढूंगा। बिना मतलब का अपमान सहना बहुत मानसिक दुख देता है; मैंने वह पीड़ा खूब झेली, तो वर्तमान और आने वाली पीढ़ियों को उससे बचा सकता हूं — कि एक प्रश्न पूछने पर उन्हें प्यार से उत्तर मिले, फटकार नहीं। इसलिए मैं खुद लोगों से मिलता हूं; यहां वीवीआईपी-वीआईपी नहीं चलता, किसी का बैकग्राउंड काम नहीं करता। लोगों ने अध्यात्म का जो रहस्य बनाया है, सब खोल दूंगा — ताकि जिसे लोग गंवार समझते हैं वह भी सीना ठोककर कहे कि मैं भी मोक्ष तक पहुंचूंगा। इसका अधिकार हर व्यक्ति को है।

**प्रश्न: गुरु जी, अपना और पराया क्या है? (P18-0129)**

अपना कभी पराया नहीं होता, पराया कभी अपना नहीं होता — न कोई अपना है न कोई पराया। यह भाव मन में बस जरूरत में है: जो आपकी जरूरत आपके तरीके से पूरी कर देता है वह अपना हो गया, जो नहीं करता वह पराया। इसीलिए कभी अपना भी पराया लगने लगता है — पहले आपके तरीके से जरूरत पूरी करता था, अब नहीं करता। साथ रहना और मानसिक रूप से साथ रहना अलग बात है। जब आपने ईमानदारी अपनाई और वे बेईमानी में ले जाना चाहते हैं, तो आप बेईमानी में कैसे जाओगे — बस, वे फिर आपके लिए पराए हो गए; अपने होते तो आपको ईमानदारी में साथ देते। इस तरफ कोई तभी बढ़ता है जब उसे कुछ बात समझ आती है, नहीं तो वह उन्हीं अपनों के बीच, उन्हीं जैसा होता।

**प्रश्न: गुरु जी, भौतिक जगत क्या है और अध्यात्म क्या है? (P18-0130)**

भौतिक जगत वह है जो हमने अपना संसार बसा लिया; अध्यात्म वह है जो हमारे बनाए उस संसार के बाहर है। भौतिक का मतलब होता है संसाधन; उनका किस तरीके से सदुपयोग करना है यह अध्यात्म सिखाता है; और साधन को परिवर्तन करके क्या से क्या बनाना है, यह विज्ञान है। इसकी जरूरत हर व्यक्ति को है।

**प्रश्न: गुरु जी, अटैचमेंट (लगाव) क्या है? माता-पिता से लगाव तो प्रेम से है, उसमें हमें कुछ नहीं चाहिए — फिर भी लगाव क्यों है, और उसे मिटा भी नहीं सकते?**

(P18-0131)

लगाव जरूरत का लगाव है। प्रेम तो तब होगा जब आपको कुछ नहीं चाहिए; उसके पहले प्रेम नहीं हो सकता। माता-पिता ने आपको पाला है, आपको उनसे मिला है, इसलिए लगाव है — रास्ते के अनजान व्यक्ति से लगाव लगाकर देखिए, नहीं होगा। ताऊ-ताई, चाचा-चाची भी तो माता-पिता समान हैं, उनसे उतना लगाव क्यों नहीं? क्योंकि वहां से उतना मिला नहीं। लगाव तब होता है जब आपके तरीके से आपको कुछ मिलता है — स्नेह, प्यार, आशीर्वाद, या "अच्छा पुत्र हूं" का सुख, या कर्तव्य-दायित्व निभाने की शांति। एक-दूसरे से जुड़ने का मतलब जरूरत है; जरूरत हटा दो तो आप किसी से जुड़ ही नहीं पाओगे। कुछ मिटाइए मत, कुछ पकड़िए मत — न कुछ पकड़ना है न कुछ छोड़ना है, उस स्थिति में आना है।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या हम जब भी किसी से बात करते हैं, उसमें लेनदेन होता है? माता-पिता से बात करने में तो हम कुछ नहीं लेते। (P18-0132)**

हां, हम कुछ बात कर रहे हैं तो इसका मतलब लेनदेन हो रहा है; लेनदेन खत्म तो बात खत्म — शब्द निकलने के लिए कोई आधार चाहिए। शब्दों के पीछे हम कुछ देना चाहते हैं — स्नेह, प्यार; नहीं तो प्रार्थना भी नहीं उठेगी। माता-पिता की घर में सारी व्यवस्था कर दो, भोजन दो — वह शरीर को मिलेगा; पर आत्मिक सुकून तब मिलेगा जब आप उनसे बात करोगे, पूछोगे "आप कैसे हो" और वे पूछेंगे "बेटा कैसे हो" — "मैं ठीक हूं", यह आपने उन्हें दिया। बात न करोगे तो वे बेचैन हो जाएंगे। बिना बोले भी हम पांचों इंद्रियों से लेनदेन करते रहते हैं — पेड़ का सूखापन देखकर पानी देते हैं; नदी के पास बैठते हैं, गटर के पास नहीं, क्योंकि नदी हमें वह दे पा रही है जो हमें चाहिए।

**प्रश्न: गुरु जी, हम बालों में डाई क्यों लगाते हैं — क्या उसमें भी लेनदेन है?**

(P18-0133)

सफेदी प्राकृतिक आई है तो स्वीकार करो — क्यों नहीं स्वीकार होता? हम बालों को भी नेचुरल नहीं रहने देते, डाई लगाकर उनसे समाज में सम्मान लेते हैं। डाई से बाल और खराब होते हैं, केमिकल से सिर-शरीर को भी नुकसान है, फिर भी लगाते हैं — तो बालों की जरा भी फिक्र नहीं, बस बालों के द्वारा कुछ मिलना चाहिए; आपको सिर्फ अपनी फिक्र है। बस उचित तरीके से उपयोग करने में लगे — उचित करोगे तो मुक्ति पा जाओगे, अनुचित करोगे तो बंधन में फंस जाओगे।

**प्रश्न: गुरु जी, मैं अपने घर में काम करने वाले या कर्मचारी को तय पैसे देकर पूरी सच्चाई से व्यवहार करता हूँ, लेकिन मुझे पता है कि उसकी क्षमता इससे ज्यादा है; उसे आगे बढ़ाऊँ तो वह मेरे पास काम नहीं करेगा। क्या उसे वहीं तक सीमित रखना ईमानदारी है? (P18-0134)**

अगर उसके लिए कुछ अच्छा कर सकते हो तो अच्छा करो — पोंछा आप खुद मार लो, या और कोई मिल जाएगा। अगर उसकी योग्यता आपको दिख रही है तो उसे आगे बढ़ाइए। आपको लगता है उसकी जगह खाली रह जाएगी? किसी वस्तु को हटाते ही हवा जगह ले लेती है — यहां जगह खाली नहीं होती, और जहां उसे ले जाओगे वहां भी पहले कोई काम कर रहा था। पूरी ईमानदारी यह बताने में है कि आप इससे आगे जा सकते हो, मैं आपका सपोर्ट कर सकता हूँ — और मेरे लिए कोई और ढूँढ दो; वह और अच्छे से ढूँढ देगा। जो बताया है उसे सिर्फ लिखकर मत रखना, इंप्लीमेंट करना; शुरुआत में बाहरी तकलीफ होगी, सामना करना पड़ेगा, लेकिन वह आपको आत्मिक रूप से उठाएगी।

**प्रश्न: गुरु जी, जब आप समाधि की अवस्था में आए और कुछ नहीं रहा, तब आपकी क्या परीक्षा हुई? (P18-0135)**

उस समय मूल तो पैसे की परीक्षा होती है। जैसे मुझे एक जन मिले, बोले — एक करोड़ में आपका आश्रम बन जाएगा। मैंने कहा, मुझे आत्मज्ञान के अलावा कुछ नहीं चाहिए; उनके साथ कई दिन रहा, फिर छोड़कर निकल गया। परीक्षाएं होती हैं।

**प्रश्न: गुरु जी, गृहस्थी मेंटेन करते हुए साधक साधना कैसे करे? (P18-0136)**

ईमानदारी से उसकी इनकम हो — आंतरिक ईमानदारी और मेहनत की; मेरे कर्म से किसी को तकलीफ न हो, होती है तो उसका जिम्मेदार मैं हूँ। भूखे को भोजन, प्यासे को पानी — दरवाजे से कोई भूखा-प्यासा न जाए, कम से कम एक टाइम का। मान की इच्छा का त्याग, योग्यता से ज्यादा पाने की इच्छा का त्याग, दिखावे का त्याग, बड़ा-छोटा बनने का त्याग — इस भाव से जीवन जियो।

**प्रश्न: गुरु जी, प्राणायाम के बारे में कुछ बताएं। (P18-0137)**

बस अपनी शुद्धता करो, और क्या। मैंने तो ज्यादातर ईमानदारी और सत्कर्म पर ध्यान दिया — मूल वही है। मूल की सफाई कर दो, बस बात खत्म।

**प्रश्न: गुरु जी, अपने "होने-पन" (कुछ बचे रहने, नाश न होने की चाह) के रहते भी क्या आत्मदर्शन हो सकता है? (P18-0138)**

जब तक आप बाहर से पूरी तरह छूट नहीं जाते, तब तक नहीं होगा। पूरी तरह — राग-द्वेष कहीं भी नहीं रहेगा, तभी होगा; नहीं तो नहीं होगा।

**प्रश्न: गुरु जी, आदमी जब पूजा या सुधार की तरफ जाता है तो उसे विपत्तियों और तकलीफों का सामना क्यों करना पड़ता है? (P18-0139)**

क्योंकि वह सुधरने जा रहा है। पहले बिगड़ रहा था तो बिगड़ने वाले साथ थे, झुंड की ताकत थी, बेईमानों का साथ था, कोई तकलीफ नहीं थी। अब सुधरना चाहता है तो न सुधरने वाले उसके साथ हैं, न बिगड़ने वाले — वह झुंड से बाहर, अकेला हो जाता है। जैसे टिकट की लाइन — अपनी धीमी लाइन छोड़कर तेज वाली में गए, वहां खराबी हो गई; पुरानी में लौटना चाहो तो कहते हैं आखिर में लगे। आपने बेईमानी वाली लाइन छोड़ दी, और ईमानदारी वाले अभी अपनाएंगे नहीं — तो अभी आप कहीं के नहीं हो; बहुत तकलीफ और अकेलापन झेलना पड़ेगा। फिर जब वे देख लेंगे कि यह पक्का ईमानदार है, तो ईमानदार वाले आपको अपने झुंड में ले लेंगे। बेईमानी में रहना आदत के कारण ठीक लगता है, पर उसका परिणाम भयानक है; एक बार यह संघर्ष झेल लो, हमेशा के लिए निकल जाओगे — वहां तो सुख-दुख, सुख-दुख लगा ही रहेगा।

**प्रश्न: गुरु जी, आपने यह ज्ञान कैसे पाया? क्या ज्ञान बिना गुरु के पाया जा सकता है, और जो गुरु ज्ञान देता है उस पर यकीन कैसे करें? (P18-0140)**

आपकी समझ में आए तो यकीन करना, नहीं तो निकल लेना। किसी से पता पूछा और उसकी भाषा समझ आए तो ठीक, नहीं तो किसी और से पूछो — बताने वालों की कमी नहीं। विश्वास प्रकृति की व्यवस्था की प्रथम सीढ़ी है, लेनदेन में करना ही पड़ता है; लेकिन विश्वास के बाद भी विश्वास करते रहना अंधविश्वास है। जैसे दो लोगों ने दुकानदार से सामान मंगाया, उसने नहीं लाया — जिसके पास पैसे थे वह दूसरी दुकान से ले आया; जो कमजोर था वह "कल आना" के आश्वासन पर बार-बार जाता रहा — यह अंधविश्वास है, कमजोरी की वजह से। अंधविश्वास को विश्वास का नाम मत दो; "विश्वास किया, धोखा मिला" — नहीं, वह अंधविश्वास था; विश्वास में धोखा नहीं होता, सब प्रत्यक्ष हो जाता है। ज्यादा समय दिया मतलब कहीं न कहीं आप कमजोर थे, नहीं तो तुरंत फैसला कर लेते कि तुम नहीं करोगे तो कोई और करेगा।

**प्रश्न: गुरु जी, सिस्टम (प्रकृति की व्यवस्था) में जीना क्या है, और हम परेशान क्यों रहते हैं? (P18-0141)**

विश्वास सिस्टम की व्यवस्था है, आपको करना ही पड़ेगा, आप चाहो या न चाहो — पूरा सिस्टम काम करता है। सिस्टम को समझकर उसमें जीना, यही ज्ञान है। आप सिस्टम के विपरीत जीना चाहते हो, इसलिए परेशान हो। पलकें अपने आप झपकती हैं; आप जानबूझकर झपकाकर देखो, कुछ ही देर में थक जाओगे — सिस्टम आपके लिए बना है। "कुछ नहीं चाहिए" का मतलब है योग्यता और जरूरत से ज्यादा को छोड़ना — सिस्टम में रहकर, सिस्टम से बाहर जाकर नहीं; दुनिया छोड़कर जाओगे कहां?

**प्रश्न: गुरु जी, मैं काम भाव (और भोग) छोड़ना चाहता हूं — क्या यह संभव है? कहां जाऊं? (P18-0142)**

कहां जाओगे? आपके शरीर में ही भोग और भोजन दोनों हो रहे हैं। आपके शरीर में कितने जीव हैं — इतनी देर में पता नहीं कितने पैदा हो गए, कितने मर गए; यथा पिंडे तथा ब्रह्मांड। भोजन कम कर दो तो शरीर शरीर को खाता है, पूरी चर्बी खा जाएगा। आप कहते हो मैं काम भाव छोड़ दूंगा — तुम अकेले छोड़ोगे, पता नहीं इसके अंदर कितने लाखों-करोड़ जीव काम भाव में, भोजन में, पैदा करने में लगे हैं। (तो भागना नहीं है — गुरु जी आगे बताते हैं: बस बेईमानी छोड़नी है, बाकी सब अपने आप हो रहा है।)

**प्रश्न: गुरु जी, हमारे शरीर में और दुनिया में रोज करोड़ों जन्म-मृत्यु हो रहे हैं, पर हमें फिक्र सिर्फ अपने लोगों की होती है — ऐसा क्यों? अपने बेटे के लिए सब लगा देते हैं, पड़ोसी के बेटे के लिए नहीं। (P18-0143)**

आपको फिक्र बस उनसे है जिनसे आपको मिलता है, और किसी की नहीं। दायरे में करोगे — बेटा गिरे तो सब कुछ लगा दोगे, पड़ोसी का गिरे तो उठाकर घर तक पहुंचा दोगे, सब दांव पर थोड़ी लगाओगे। वह मेरे लिए प्रिय है जो मेरी जरूरत मेरे तरीके से पूरी करता है। मां को बेटा मारकर भगा दे तब भी वह उसका भला चाहती है, क्योंकि उसने उसे पाल-पोसकर बड़ा किया, उसमें उसका स्नेह, लगाव है। घर से खबर आए कि बेटा, पत्नी, मां, भाई बीमार हैं — सबके लिए अलग-अलग भाव उठेगा; जिससे ज्यादा लगाव, उसके लिए ज्यादा।

**प्रश्न: गुरु जी, मेरा सबसे ज्यादा लगाव मां से है, हालांकि माता-पिता का झुकाव छोटे भाई की तरफ है; मैं कहता हूं पूरी संपत्ति उसे दे दो, मुझे नहीं चाहिए, मैं अपना कर्तव्य करूंगा — क्या यह ठीक है? (P18-0144)**

अगर सच में मां आपको बच्चे और पत्नी से भी ज्यादा प्रिय है और उस तरीके से सेवा करते हो, तो बहुत बड़ी बात है — ज्यादातर लोग बस बोलते हैं, हॉल में फोटो लगाकर माला चढ़ाते हैं। देखो दिन में कितना समय मां के पास बैठते हो, बात करते हो। अगर इस भाव में जीते हो तो बस ईमानदारी अपना लो, सत्कर्म अपना लो — तो आप घर में ही साधना कर रहे हो। पर जांच लेना, यह बहुत सूक्ष्म है — लगाव क्यों है, कहीं उसके पीछे धन-वैभव या बंटवारे की कोई बात तो नहीं। कर्तव्य को ईमानदारी से करना, यह ध्यान रहे — कर्तव्य निभाने में कभी बेईमानी मत करना, नहीं तो फंस जाओगे।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या प्रियजनों (मां-बाप, पत्नी, बच्चों) के साथ भी हमें एक दायरा (सीमा) बनाना चाहिए और उन्हें साफ बता देना चाहिए — जैसे "आपकी इस बात से मुझे ठेस पहुंचती है, आप ऐसा न करें"? (P18-0145)**

हां, यह दायरा क्लियर-कट बनाकर बोलना चाहिए, लेकिन उचित तरीके से — इतना सीधा मत बोलो कि उन्हें चोट लगे; अपनी बात रख दो कि मैं आपके लिए इतना कर सकता हूं। बोलने का माहौल कैसा है, वह सुनने के लायक है या नहीं, यह देख लेना। अगर फिर भी वे करें तो उनका त्याग कर दो। अगर उनके बजाय अपने उस भाव का त्याग करोगे (झेलते रहोगे), तो अपने आप को धोखा दोगे — अंदर उनके लिए द्वेष और घुटन पैदा हो जाएगी। इसलिए बोल देना ही ठीक, और त्याग कर देना ही ठीक। त्याग इसलिए कि त्याग से वे समझ जाएं — अगर कोई बिगड़ रहा है तो साथ रहने का क्या मतलब; हो सकता है दूर जाने के बाद सुधर जाए; आंखों में आंसू भी हों तो भी त्याग करके निकल जाओ और परिणाम देखो। अगर भाव का त्याग करके झेलते रहे, तो वे सुधर नहीं पाएंगे, और उनके बिगड़ने के जिम्मेदार आप होंगे — क्योंकि बात आपकी समझ में आ गई थी, उनकी नहीं। त्याग ही परम सुख है।

**प्रश्न: गुरु जी, मैं अपने आप को कैसे सीमित रखूं, अपना दायरा कैसे तय करूं?**

(P18-0146)

अपनी योग्यता देख लीजिए।

**प्रश्न: गुरु जी, जब "कुछ नहीं" हो रहा था, तब क्या आपकी खाने-रहने की या कोई मानसिक पीड़ा की परीक्षा हुई? (P18-0147)**

बहुत कुछ होता है — यह तो शुरुआत में ही हो जाता है, उस समय बहुत कुछ होता है।

**प्रश्न: गुरु जी, प्रत्यक्ष ज्ञान और अप्रत्यक्ष ज्ञान में क्या अंतर है? (P18-0148)**

प्रत्यक्ष का मतलब है तुरंत समझ में आ जाना। अप्रत्यक्ष का मतलब है आपको बोला जा रहा है पर आप समझ नहीं रहे, आपको प्रमाण दिया जा रहा है और प्रमाण के द्वारा आप समझ रहे हो — मतलब आपको किसी पर विश्वास-भरोसा करना पड़ रहा है, वह अप्रत्यक्ष है।

**प्रश्न: गुरु जी, आपने कहा पत्थर भी चेतन है और संवाद कर सकता है — तो चेतना क्या है? आधुनिक विज्ञान ऊर्जा को जान पाया, चेतना को नहीं। (P18-0149)**

पत्थरों में भी चेतन है — उन्हें जड़-चेतन कहा गया है; वे अपने से चल, उठ, बोल नहीं सकते, लेकिन चेतन उनमें भी है। चेतन मतलब जहां पंच महाभूत का जुड़ाव होता है; आत्मा जीवात्मा बनकर चेतन में आती है। हमें चैतन्य में होना है, इस चेतन को छोड़ना है — चैतन्य ज्ञान की स्थिति, अपने स्व की स्थिति को कहा गया है। जब तक आप अपने तरीके से "चाहिए" में हो, तब तक आप चेतन में जकड़े हुए हो, और इस चेतन को बढ़ाने और सुरक्षित रखने के लिए जड़ वस्तुओं का उपयोग करते हो।

**प्रश्न: गुरु जी, कुत्ते को रोज मीठा बिस्किट खिलाना ठीक है? किसी को कितना देना चाहिए? (P18-0150)**

अगर कुछ खिलाने से किसी का पतन हो रहा है तो न खिलाओ — हमें पता है, उसे नहीं पता। बच्चे को जितनी चॉकलेट दो उतना खुश होगा, लेकिन दांत उसके सड़ेंगे, और जिम्मेदार मां-बाप और आसपास वाले होंगे। कुत्तों को ज्यादा मीठा नहीं खिलाना चाहिए, बाल झड़ते हैं; और इंसानों को योग्यता से ज्यादा पैसा, या कोई भी वस्तु नहीं मिलनी चाहिए — वे अपना पतन कर देते हैं। अगर आप योग्य नहीं हैं और कुछ भी मिलेगा — रिश्ते मिलें, पैसा मिले — आप उसका दुरुपयोग ही करोगे।

**प्रश्न: गुरु जी, शरीर में भोग-भोजन दोनों हो रहे हैं, हम क्या छोड़ सकते हैं, कहाँ भागेंगे — तो क्या यही स्वीकार भाव रखना है कि जो हो रहा है उसे देखना है? कृपया प्रकाश डालें। (P18-0151)**

बस बेईमानी नहीं करनी है जीवन में — मानव ने एक यही धारण किया है, बाकी सब अपने आप हो रहा है, आपकी जरूरत में हो रहा है। बेईमानी आपको करनी पड़ती है, प्लानिंग से, हर बार — पूरे होशपूर्वक करते हो तभी होती है। आप किसी मोहमाया में नहीं फंसे, कहीं नहीं फंसे — बस बेईमानी में फंसे हो। शब्दों का लेनदेन भी बेईमानी से करते हो — सामने झूठी बड़ाई, और जाते ही उसे गालियां देना — यह बेईमानी है; गाली देनी थी तो सामने देते, इतनी ताकत नहीं थी तो उस लायक बनते। आपने बस बेईमानी धारण की है, इसी से परेशान हो; बाकी रिश्ते, मोहमाया किसी से परेशान नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, मनुष्य और पशु में क्या अंतर है? हमने अन्य जीवों से अलग क्या किया है? (P18-0152)**

बताओ, बेईमानी के अलावा आपने अन्य जीवों से अलग क्या किया? वे भी बच्चे पैदा कर रहे हैं, पाल-पोसकर बड़ा कर रहे हैं, घोंसला बना रहे हैं — और वे पूरी तरह प्राकृतिक तरीके से जी रहे हैं, आप अप्राकृतिक तरीके से भी जी रहे हो। अध्यात्म की तरफ भी इसलिए आए क्योंकि बेईमानी की; बेईमानी न करते तो अध्यात्म की जरूरत ही नहीं पड़ती, क्योंकि स्व का ज्ञान तो आपके पास था ही — अज्ञानता आपने धारण की है। इस जिंदगी में त्यागने के लिए बस इतना है — बेईमानी, और कुछ भी त्यागा नहीं जा सकता। जगह, व्यवस्था, भोजन का तरीका, कपड़ों का रंग बदल सकते हो, पर जीने के लिए सब अपनाना पड़ेगा; त्यागने के लिए कुछ है तो बेईमानी।

**प्रश्न: गुरु जी, पशु सीख नहीं सकता, हम सीख सकते हैं — क्या गुरु से ज्ञान लेकर बुराई छोड़ सकते हैं? हमारे बिगड़ने का कारण क्या है? (P18-0153)**

सीखना इसलिए पड़ रहा है क्योंकि बुराई को धारण किया, नहीं तो सीखने की जरूरत आपको भी नहीं। पशु बिगड़े ही नहीं, तो सीखें क्यों — इतिहास में जितनी किताबें लिखी गईं, मानव को सुधारने के लिए; किसी ने नहीं लिखा पशुओं को कैसे सुधारना है, क्योंकि वे अपने मूल स्वभाव में जीते हैं। आपके बिगड़ने का कारण — अपने तरीके से करवाना, लालच।

**प्रश्न: गुरु जी, क्या हमारी बेईमानी के लिए समाज जिम्मेदार नहीं है? समाज में शामिल होने के लिए कुछ बेईमानी धारण करनी ही पड़ती है। (P18-0154)**

नहीं, आप जिम्मेदार हो, समाज नहीं। सीधा बताओ — मात-पिता से लेकर किसी ने आपको बेईमानी सिखाई? हर व्यक्ति यही कहता है — ईमानदारी से पढ़ना, खेलना, काम करना; बेईमान भी अपने घर में ईमानदार नौकर चाहता है। कोई ऐसा व्यक्ति मिला जिसने मजबूर किया? दूसरे आपसे बेईमानी तभी करेंगे जब पक्का हो जाएगा कि आप बेईमान हो; ईमानदार रहोगे तो वे ईमानदारी से ही पेश आएंगे — ईमानदारी से भी समाज में शामिल हो सकते हैं, ईमानदारी से जीवन बहुत आराम से जिया जा सकता है। बेईमानी हम छुप-छुपकर, अपनी जरूरत की पूर्ति के लिए, योग्यता से ज्यादा पाने के लालच में करते हैं — योग्य हो तो बेईमानी की जरूरत ही नहीं, कर भी नहीं पाओगे। कहीं से "इनडायरेक्टली आया" — तो लिया क्यों? गटर का पानी सामने आए तो पी लो? गालियां भी किसी ने नहीं सिखाई — जितनी सुनीं उससे ज्यादा आप पैदा कर लेते हो; अच्छाई भी सुनी, वह क्यों नहीं सीखी? समाज को दोष मत दो, अपनी गलती स्वीकार करो कि मैंने लालच में बेईमानी की, अब छोड़ना चाहता हूं — यह सच्चाई है। आध्यात्मिक चर्चा में बैठे हो तो उस लेवल पर, आधार के साथ बोलो।

**प्रश्न: गुरु जी, समाज का हमारे जीवन में क्या योगदान है? क्या हमें मशीन (गूगल/इंटरनेट) पर पूरी तरह निर्भर रहना चाहिए? (P18-0155)**

समाज का हमारे जीवन में बहुत सहयोग है। जिन्होंने भोजन कराया, प्यास मिटाई, रास्ता बताया — उनके नाम भी नहीं जानते; रास्ता पराया ही बताता है, वे समाज के लोग होते हैं। कितने भी पढ़े-लिखे हो, प्लेटफॉर्म पर पूछना पड़ता है ट्रेन किस नंबर पर आएगी, और साधारण आदमी ही बताता है। एक व्यक्ति को समाज से हटाकर सोने का महल दे दो तो वह भागकर झोपड़ी में आ जाएगा। एक बार इंदौर में नेट प्लेटफॉर्म 4 बता रहा था, ट्रेन 1 पर खड़ी थी — इक्वायरी से पूछा, दौड़कर पकड़ी, नहीं तो छूट जाती। यूपी के कुछ लोग गूगल देखकर अधूरे टूटे हाईवे पर गए और सब खत्म हो गए — काश किसी आदमी से पूछ लेते। गूगल, फेसबुक, इंस्टाग्राम पर आप जैसे लोग ही जानकारी डालते हैं — सही भी, गलत भी; जांचने की क्षमता आपकी होनी चाहिए। बाप का नाम गूगल नहीं, मां बताएगी। इतना मशीन पर निर्भर मत होइए। इस संसार में कोई छोटा-बड़ा नहीं, हम एक-दूसरे के पूरक हैं — सम्मान के साथ एक-दूसरे की सहायता करें और निकल लें।

**प्रश्न: गुरु जी, जब किसी बात की हमें समझ नहीं होती और कोई हमें समझा रहा हो, तो कैसे तय करें कि वही सही है? (P18-0156)**

एक मार्ग पर संशय हो गया तो दो लोगों से पूछो — दो लोग वही बात करें तो ठीक, विपरीत बात करें तो दोनों में से एक गड़बड़ है, तीसरे को ढूँढो; समझ का भी उपयोग करना पड़ेगा। और आप क्या खोजने गए हो, उसके बारे में पूरी जानकारी होनी चाहिए — दुकान पर क्या लेने जा रहे हो, पहले पता करके जाओ, उस लायक बनकर जाओ। किताब बेचने वाले से "क-ख सिखाओ" मत कहो, वह किताब का व्यापार करता है, पढ़ाता नहीं — पहले स्कूल जाकर क-ख सीखो।

**प्रश्न: गुरु जी, समाज में वह इंसान भी है जो सही प्लेटफॉर्म बताता है, और वह भी जो कहता है "हजार रुपये रखो तभी फाइल आगे बढ़ेगी" — तो समाज में दोनों चीजें हैं; बेईमानी समाज से मिली, भले ली हमने — क्या यह सही है? (P18-0157)**

तरीका हम लेकर पैदा होते हैं — आपने अपने तरीके से ले लिया। अगर आप नहीं लेते और समाज जबरदस्ती देता, तब आप बोल सकते थे कि समाज जिम्मेदार है; तो सीधा क्यों न बोलें कि जिम्मेदार मैं हूँ। समाज में हर चीज है, सबकी दुकान लगी है, सब बिक रहा है — आपको क्या खरीदना है, देख लो। गिरते समय भी आपको लग रहा था कि मैं गिर रहा हूँ — इतनी समझ थी। हम भी पहले सोचते थे कि लोग हमारे साथ गलत करते हैं, सब मतलब रखते हैं; बाद में समझ आया कि जो कुछ हो रहा है उसका जिम्मेदार एक व्यक्ति है — स्वयं, और कोई भी नहीं। मैं भी उससे गुजरा हूँ, जिससे आप जूझ रहे हैं।

**प्रश्न: गुरु जी, जो शरीर से, बुद्धि से या पैसे से बलवान है, उससे हमें भय क्यों लगता है? (P18-0158)**

(क्योंकि आप) बलवान नहीं हो — बाहर से बलवान है, अंदर से नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, मुझे आत्मज्ञान चाहिए, मैं आपके पास आ रहा हूँ, आप जो बोलोगे वह मैं करूँगा — क्या आप कृपा करेंगे? (P18-0159)**

मैं तो कुछ बोलता नहीं, बस सत्संग सुनाता हूँ। एक जन ने बोलकर देख लिया (12 दिन के निर्जल व्रत वाले साधक) — सामने ही हैं। कहना बड़ा आसान है, करना कठिन।

**प्रश्न: गुरु जी, पूरे समय साक्षी भाव कैसे बना रहे? (P18-0160)**

बस इतना भाव रखिए कि कर्म करते हुए मुझे जांचते रहना है कि कोई गलती न हो जाए — तब बना रहेगा।

**प्रश्न: गुरु जी, अगर हम खान-पान पर ध्यान न दें और सिर्फ लोगों से व्यवहार पर ध्यान दें तो क्या मोक्ष मिल सकता है? (P18-0161)**

ध्यान सब पर देना पड़ेगा। जब लेनदेन खत्म होगा, तभी मोक्ष होगा — इस बात को समझ लो।

**प्रश्न: गुरु जी, घर वाले शादी के लिए जिद कर रहे हैं, पर मुझे शादी नहीं करनी, खुलकर जिंदगी जीनी है और मुक्ति पानी है — मार्गदर्शन करें। (P18-0162)**

शादी स्वयं की जरूरत है; करना न करना आपके ऊपर है। घर वालों से बोल दीजिए — शादी किसको करनी है, आपके लिए करूं कि अपने लिए? मुझे तो नहीं करनी। किसी की लड़की की जिंदगी क्यों बर्बाद करना — पता चला 40 के बाद तुम्हें वैराग्य जगा, तो वह कहाँ जाएगी? अगर नहीं करनी है तो मत करो।

**प्रश्न: गुरु जी, जागृत अवस्था में इच्छा नहीं होती, लेकिन मन सपने में अपनी इच्छा पूरी करता है, दृश्य बनाता है — इसे नियंत्रण में कैसे लाएं? (P18-0163)**

आप उचित तरीके से जीवन जिएं — सपना कभी न हुआ अपना।

**प्रश्न: गुरु जी, मोह का त्याग कैसे करें? (P18-0164)**

बस "अपने तरीके से चाहिए" — उसका त्याग करो। इतना अगर आपने कर दिया तो सब हो जाएगा। (आत्मज्ञान मतलब स्व का ज्ञान, खुद का ज्ञान।)

**प्रश्न: गुरु जी, आध्यात्म की यात्रा कैसे शुरू करें? और क्या प्रत्यक्ष ज्ञान व्यावहारिक जगत में भी उपयोगी है? (P18-0165)**

ईमानदारी और सत्कर्म करके, जरूरतमंद की सेवा करके यात्रा शुरू करो। हां, ज्ञान तो ज्ञान है — उसका उपयोग कहीं भी करो।

**प्रश्न: गुरु जी, गीता के गूढ़ शब्द आम आदमी समझ नहीं पाता — पूरी गीता पढ़कर भी समझ नहीं आता कि "मेरा" और कर्ता से मुक्त कैसे हों। तो क्या करें?**

(P18-0166)

इसीलिए कहा गया है कि शास्त्रों का अध्ययन किसी योग्य गुरु की शरण में होकर करना, क्योंकि वह अध्ययन के बाद अनुसरण कराएगा, और अनुसरण के बाद आप उसमें जीने लगोगे। आप सिर्फ अध्ययन कर रहे हो, इसलिए अहम भाव आ गया कि मैंने गीता पढ़ ली। गीता पढ़ने की नहीं, पीने की जरूरत है — वह संजीवनी है; प्रैक्टिकल की जरूरत होती है। इसलिए जीवंत गुरु का सानिध्य जरूरी बताया गया — किताब और गाइड में उत्तर तो होते हैं, पर तरीका नहीं लिखा जा सकता; शिक्षक कितना भी अच्छा हो, उसकी फोटो रखकर बच्चे नहीं पढ़ पाएंगे। विशाल पेड़ सूख गया और बगल में छोटा हरा पेड़ है — छाया चाहिए तो छोटे के नीचे बैठ जाना बुद्धिमानी है; "पूर्वज इसी के नीचे बैठे थे" कहकर सूखे पेड़ के नीचे पड़े रहोगे तो तुलना में फंस गए। जिसे सच में छाया चाहिए वह छोटे पेड़ के पास भी बैठ जाता है; जिसे नहीं चाहिए वह बड़ा, और बड़ा वृक्ष खोजता रहता है, और जिंदगी बीत जाती है।

**प्रश्न: गुरु जी, इस दुनिया में कोई सबसे बड़ा क्यों नहीं हो पाता? हमें क्या करना चाहिए? (P18-0167)**

प्रकृति की ऐसी व्यवस्था है कि अगर सब आपको मान लेंगे तो आपका ही पैदा हुआ विरोध करेगा और आपको हरा देगा — हिरण्यकश्यप को सबने भगवान मान लिया, बेटे ने कहा "खबरदार, मैं नहीं मानूंगा"; राम जी ने अश्वमेध का घोड़ा छोड़ा, उनके ही बेटों ने पकड़ लिया। आज तक कोई विश्व विजेता नहीं हो पाया, कोई सबसे बड़ा नहीं हो पाया; इतने बड़े-छोटे आए और गए, गिनती नहीं। इसलिए गिनती में मत जाओ, काम करो और निकल लो। पहले मैं नहीं था तो भी दुनिया चल रही थी, बाद में नहीं रहूंगा तो भी चलेगी। आप नहीं करोगे तो भी हो रहा था — आपको तो निकलने का एक मौका मिला है, लेकिन आप करने में फंस गए; काश आप निकलने के लिए करते।

**प्रश्न: गुरु जी, मैं एक विधवा महिला हूं; अपने बच्चों का पालन-पोषण करते हुए आध्यात्मिक मार्ग पर कैसे आगे बढ़ूं? (P18-0168)**

ईमानदारी से जरूरतों की पूर्ति करिए, और सत्कर्म करिए।

**प्रश्न: गुरु जी, विचार सूक्ष्म हो जाने से क्या होता है? और आत्मज्ञान के बाद शरीर, मन और अंतःकरण में कैसे परिवर्तन आते हैं? (P18-0169)**

कुछ नहीं — विचार छोटा या बड़ा नहीं होता, विचार विचार होता है; आप तुलना में फंस गए हो। किसी नाव में एक छेद है, किसी में 99 — दोनों एक-दूसरे पर हंस रहे हैं, पर परिणाम दोनों का एक ही होगा, किसी का पहले किसी का बाद में। बुद्धिमानी यह थी कि एक छेद वाला अपना छेद पाटकर दूसरे को अपनी नाव में खींच लेता — "तू पानी निकाल, मैं चलाता हूँ" — और दोनों बच जाते। हम एक-दूसरे के पूरक हैं; एक-दूसरे का सहयोग करें तो कुछ भी हो सकता है। और आत्मज्ञान के बाद क्या होगा — पहले आत्मज्ञान तक की यात्रा तो करो; जैसे विवाह के बाद बच्चे, फिर पढ़ाई, फिर उनकी शादी — वही होता रहेगा। आत्मज्ञान के बाद बस इतना होगा — कुछ नहीं होगा, वही आप मिलोगे।

**प्रश्न: गुरु जी, अज्ञानता क्या है? और मोह-मूढ़ता क्या है? (P18-0170)**

अज्ञानता वह है जो प्रत्यक्ष नहीं और आपने उसे पकड़ लिया। जैसे किसी गांव का पता मिला — यह ज्ञान है (जानकारी); आप वहां पहुंच गए तो वह प्रत्यक्ष हो गया — बस यही ज्ञान और अज्ञान है। मोह-मूढ़ता मतलब मोह के वश में मूढ़ता — समझने के बाद भी गलतियां कर रहे हैं।

**प्रश्न: गुरु जी, चित्त कभी राग में जाता है कभी द्वेष में, और मन बिना हमारे चाहे रेंडम कहीं भी घूमता है, ऑटोमेटिक विचार आते हैं — इसे कैसे संभालें? क्या विचारों को रोकना है? (P18-0171)**

राग और द्वेष में जाने वाले दो नहीं हैं — आप ही हो दोनों जगह; जहां अच्छा लगता है वहां राग, जहां बुरा लगता है वहां द्वेष। मन अपने आप नहीं जाता, आप ही ले जा रहे हो — शरीर का कोई अंग अपने आप नहीं हिलता; बाल हिल रहा है तो हवा हिला रही है। आप मन को शरीर की जरूरत बता रहे हो, वैसे वह स्थिर है। ऑटोमेटिक विचार भी बिना आधार के नहीं आते — आपने पहले से संचय किया है (शब्द, दृश्य, गंध, स्वाद, स्पर्श से), उसी आधार पर कल्पना बनती है; पत्ता न हो तो पत्ते से कुछ बना ही नहीं सकते। विचारों को रोकना नहीं है — आने दीजिए; बस देख लो किन विचारों में जा रहे हो और क्यों — उसके पीछे राग है कि द्वेष। विचारों से तकलीफ नहीं, उन विचारों से तकलीफ है जो अशांत करते हैं। अच्छे पल याद करना चाहते हो, बुरे अपने आप आते हैं — क्योंकि उन्हें रोका, और रोकने वाला ज्यादा आता है। इसलिए उनका सामना करो, उपयोग करो। जो करना है वो करो, मन को जहां जाना है जाने दो — देखते रहो और सही तरीके से करते रहो; कोई गिर गया तो सिर्फ देखना नहीं, उठाना है।

**प्रश्न: गुरु जी, सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण की अवस्था के बारे में बताइए।**

(P18-0172)

सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण ये शरीर का स्वभाव हैं, और आपको स्वतंत्रता है कि आप कौन सा गुण धारण करना चाहते हो — जैसा धारण करोगे वैसा परिणाम मिलेगा। राजसी और तामसी बाहर घुमाएंगे; सात्विक आपको आपसे मिलाएगा।

**प्रश्न: गुरु जी, कभी-कभी ध्यान में ऐसी चीज की कल्पना आती है जिसे हमने कभी देखा ही नहीं — वह तो स्टोर नहीं थी, फिर कैसे आई? (P18-0173)**

नहीं था तो नहीं होता। आपसे पूछा जाए पिछले हफ्ते कौन सा कपड़ा पहना था — याद नहीं, पर कपड़ा पहना तो पक्का था, घर में मौजूद है। सुबह का खाया शाम को याद नहीं — तो कैसे कह सकते हो कि जो विचार आ रहे हैं वे आपके नहीं? बचपन से समझने लायक हुए तब से आप विचार इकट्ठा कर रहे हो और आपको पता ही नहीं। अभी यहां से जाओगे तो रास्ते में बोर्ड पढ़ोगे, ब्रेक मारोगे, किसी ड्राइवर पर "यह ठीक नहीं चला रहा" धारण कर लोगे — पांच इंद्रियां पांच कैमरे हैं, हर वक्त आप धारण कर रहे हो।

**प्रश्न: गुरु जी, घर के लोग गरीबों को दान देने से मना करते हैं, समझाने पर भी नहीं मानते — फिर दान कैसे करें? (P18-0174)**

आप सत्कर्म करिए, जरूरतमंद की सेवा करिए; और दान दे रहे हैं तो देखिए कि उसका सदुपयोग हो रहा है या नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, प्रश्न बनते रहते हैं, सॉल्व होते हैं, फिर नए आते हैं, और समय पर न पूछें तो भूल भी जाते हैं — इन प्रश्नों का क्या करें? (P18-0175)**

यह मन का सिस्टम है, चलता ही रहता है; लेकिन जब तक यह नहीं निकलेगा, आप अपने आप में नहीं हो पाओगे। आपके प्रश्न भी बाहर के हैं, एक भी आपका नहीं — बाहर से लिए हैं, तो उत्तर भी बाहर से मिलेगा और प्रश्न हट जाएगा। आपने उसे अपना प्रश्न मान लिया है, और एक बार मान लिया तो बिना उत्तर मिले छुटकारा नहीं — इसलिए प्रश्न को दबाओ मत, निकालो। जैसे कोई आपको पेन गिफ्ट दे और सुबह वापस मांगे — अरबपति हो तब भी पीड़ा होगी, क्योंकि बात पेन की नहीं, आपने भावनाओं से उसे स्वीकार कर लिया; ऐसे ही आपने प्रश्न को स्वीकार किया है, अब उत्तर चाहिए।

**प्रश्न: गुरु जी, अद्वैत और द्वैत, जड़ और चेतन — क्या सब एक ही है? (P18-0176)**

एक ही से सब है। अभी आप सब में उलझे हो — सबको साधो और अपने आप को निकालो।

**प्रश्न: गुरु जी, इस कुटिया (आश्रम) का निर्माण किस भाव से हो रहा है — क्या कोई भी यहां आकर रह सकता है? (P18-0177)**

पूरे विश्व से कोई भी यहां आकर एक दिन से लेकर आजीवन रह सकता है — इसी भाव से इस कुटिया का निर्माण हो रहा है; यह आप ही लोगों के लिए बनाया जा रहा है, ताकि कोई भी साधक हो, उसे एकांत मिले और स्वतंत्रता मिले। और इस भाव से कि यहां का कोई मालिक न हो — कोई यह पता न कर पाए कि आखिर यहां का मालिक कौन है। प्रकृति व्यवस्था कर देती है — लोग आते हैं, जाते हैं।

**प्रश्न: गुरु जी, आपके जैसा ईमानदार कैसे बनें? (P18-0178)**

आपके जैसा ईमानदार बनो (किसी और जैसा नहीं)। ईमानदारी बस ईमानदारी होती है — वह तुलना में नहीं आती।

**प्रश्न: गुरु जी, उपवास का हमारे जीवन में क्या महत्व है? (P18-0179)**

कुछ हो या न हो, इतना तो पक्का है कि हफ्ते में एक दिन उपवास रखने से पाचन क्रिया सही रहती है — यह लाभ है।

**प्रश्न: गुरु जी, आत्मा का स्वाभाविक गुण लेने का है या देने का? अध्यात्म से जुड़ने से पहले लेने की भावना ज्यादा थी, जुड़ने के बाद देने की भावना क्यों आने लगती है? (P18-0180)**

आत्मा का गुण ना लेने का है ना देने का — आत्मा सारे गुणों से रहित है, लेनदेन से परे है। देने वाले दो तरह के होते हैं — एक देकर ज्यादा पाना चाहते हैं (लाखों देकर करोड़ों चाहिए), ऐसे कामनाओं वालों को राजसी या तामसी गुरु मिलते हैं; सात्विक गुरु ना कुछ देता है ना लेता है, वह बताता है कि लेनदेन से कैसे मुक्त हो जाओ। अध्यात्म की तरफ बढ़ते हो तो अपेक्षा में नहीं देते, बस कर देते हो, क्योंकि आप निर्विकार होना चाहते हो। जो आपके पास है — धन, तन, ज्ञान — उसे सत्कर्म में लगाकर अब आप उसे बढ़ाना नहीं, खत्म करना चाहते हो; बनाए हुए अस्तित्व को मिटाना चाहते हो। देते हुए भी आप कुछ दे नहीं रहे, खाली कर रहे हो, क्योंकि उस देने के पीछे कुछ नहीं चाहिए — आप अपने मूल पर आना चाहते हो जहां ना लेन था ना देन।

**प्रश्न: गुरु जी, जब आत्मा का कोई स्वभाव ही नहीं, तो वह अपने मूल (आनंद) की ओर जाना क्यों चाहती है? (P18-0181)**

इसलिए कि यह बना-बनाया स्वभाव कामनाओं में, मान के चक्कर में, इच्छा-अपेक्षा में आकर आत्मा जीवात्मा हो गई और अब परेशान हो गई। जैसे पानी फ्रिज में गया तो बर्फ बन गया, पर बर्फ का अस्तित्व रहेगा नहीं, उसे मिटना ही है और मूल पानी में आना है — चाहे आइसक्रीम बनाकर बाजार में बेच दो। वैसे ही हम कामनाओं में बिक रहे हैं; बिकते-बिकते थक गए तो समझ आई कि लेनदेन से कैसे मुक्त हो जाऊं — जिस दिन लेनदेन से मुक्त हो गया उस दिन सौ प्रतिशत अपने मूल में आ जाऊंगा। आत्मा परमात्मा से मिलने के लिए वैसे ही बेचैन रहती है जैसे बच्चा मां से मिलने के लिए; घर लौटने जैसा सुकून वहीं मिलता है। आनंद आत्मा का स्वभाव नहीं, वह तो उसका मूल है ही।

**प्रश्न: गुरु जी, सत्संगों में सत्कर्म के पीछे मुक्ति या मोक्ष जोड़ दिया जाता है — तो मुक्ति के लिए देना भी तो एक भावना/कामना हुई? (P18-0182)**

भावना तो जुड़ेगी, लेकिन यह भावना आपको स्व तक लेकर जाएगी, क्योंकि आप निर्विकार होना चाहते हो। कपड़ा गंदा हो गया, साबुन से धोना चाहते हो — यह कोई कामना नहीं, गंदगी धो रहे हो। चोट लगाना कामना है, पर चोट लग गई तो मलहम-पट्टी करके ठीक करना कामना नहीं। आपने जो मेहनत से कमाया — वह भी एक तप है — उसे सही जगह सदुपयोग में लगा रहे हो तो लोगों के रोम-रोम से आशीर्वाद मिलेगा और निर्विकार होने में सहायता मिलेगी। जैसे जेल में जिसका आचरण अच्छा रहा, सेवा में लगा, किसी को गलत शब्द नहीं बोला, उसकी कुछ सजा जेलर कम करवा सकता है — पूरी नहीं; वैसे ही सत्कर्म से भोग कुछ हल्का होता है। जब तक मूल तक, उस परम सत्ता तक नहीं पहुंचोगे, यात्रा रुकेगी नहीं — जैसे ऊपर फेंकी चीज रुकने की जगह मिलने तक गिरती रहती है।

**प्रश्न: गुरु जी, जीवन की यात्रा कितने तरह की होती है? (P18-0183)**

यात्रा तो चल ही रही है, कभी रुकती नहीं; तब तक चलेगी जब तक उस परम सत्ता तक नहीं पहुंच जाओगे। तीन तरह के लोग, तीन तरह के साधक, तीन प्रवृत्तियां होती हैं — राजसी, तामसी, सात्विक; भोजन भी तीन तरह का। एक कामनाओं में यात्रा करते हैं, एक कामनाओं से मुक्त होकर आत्म दर्शन के लिए यात्रा करते हैं, और एक आत्म दर्शन के बाद परमात्मा की यात्रा करते हैं। आप देख लो आप कहां खड़े हो।

**प्रश्न: गुरु जी, पूरी जिंदगी भौतिकवाद में मेहनत करके जो चीजें हासिल कीं, अब उनका उपयोग करना क्या कामना में आएगा? (P18-0184)**

पहले कामना को समझो — योग्यता से ज्यादा चाहिए, वह कामना है; आपकी जरूरतें कामना नहीं। शरीर को भोजन चाहिए, पर भोजन मेरे ही तरीके से चाहिए — वह कामना; शरीर को ठंड-गर्मी में कपड़ा चाहिए, पर मेरे तरीके से चाहिए — वह कामना। जो आपने संघर्ष करके कमाया, अगर बेईमानी से कमाया तो वह कामना में आएगा, ईमानदारी से कमाया तो वह कामना नहीं है। अगर आपका जीवन अशांत है, उथल-पुथल है, तो समझ लो आपने कर्म के प्रति ईमानदारी नहीं, बेईमानी की है। ईमानदारी होती तो वे वस्तुएं और व्यवस्थाएं आपको सुकून और शांति देतीं। जिस दिन गलत काम किया, उस रात बेचैनी होती है, उठने के बाद भी बेचैनी रहती है।

**प्रश्न: गुरु जी, किसी से मिलने पर कभी पॉजिटिव वाइब और खुशी, तो कभी अंदर से दुख का भाव क्यों होता है? (P18-0185)**

इसलिए कि जिसके लिए आप गए थे वह नहीं हो रहा, तब निराशा, दुख, पीड़ा होगी; और जिसके लिए गए थे वही मिल रहा है तो पीड़ा नहीं होगी। कामना रखे बिना तो आप जा ही नहीं सकते — अभी कामनाओं में जी रहे हो; निर्विकार होने की कामना, अपने प्रश्न के उत्तर पाने की कामना तो रखनी ही पड़ेगी। बिना कामना जाना परम स्थिति पर, आत्म दर्शन के बाद ही हो सकता है। पहले कामनाओं के लिए जा रहे थे, अब कामनाओं से मुक्त होने के लिए जा रहे हो — फर्क इतना है कि यह कामना आपको आपसे मिलाएगी, वह कामना संसार में भटकाएगी। सारा खेल भाव का है — भाव विद्यते देवा।

**प्रश्न: गुरु जी, कहते हैं जगत मिथ्या है, दुनिया क्षणभंगुर और चलायमान है — तो सत्य और स्थिर क्या है? (P18-0186)**

दुनिया मिथ्या नहीं, यह रूप मिथ्या है — यही लोग समझ नहीं पाते। यह जगत भी उससे है, आत्मा भी उससे है। यह रूप पहले नहीं था, बाद में नहीं रहेगा, पर तत्व तो रहेगा — पांच तत्व में विलीन हो जाएगा, रूप का नाश होगा। हम तत्व में नहीं, रूप में फंसे हैं; रूप परिवर्तनशील है। कामनाओं वाला आपके शरीर को देखता है, आत्मज्ञानी शरीर को नहीं, आपको देखता है। पर उसे तभी देख पाओगे जब आत्म दर्शन होगा; उसके पहले देखना सिर्फ नाटक होगा। बाजार में नकली बड़ा बिकता है, सच सामने आता ही नहीं — इसलिए "रूप मिथ्या" नहीं, "जगत मिथ्या" बोला जाता है।

**प्रश्न: गुरु जी, अगर परमात्मा ने दुनिया बनाई तो सुख की दुनिया क्यों नहीं बनाई? यहां इतना दुख क्यों है? (P18-0187)**

सुख की दुनिया ही बनाई है। इस दुनिया में कहाँ दुख है? इसी दुनिया में महात्मा रह के गए, वही भोजन, कपड़ा, मकान उपयोग करके परम आनंद में रहे — अगर इस जगत में दुख होता तो वे आनंद में कैसे जी पाते? दुख आपकी दुनिया में है — सबका अपना-अपना एक संसार है। आपने अपने जगत का निर्माण किया और उसे इतना अशांत कर दिया कि अब परमात्मा के जगत में आना चाहते हो पर आ नहीं पा रहे, क्योंकि आपको अपने तरीके से चाहिए। यह संसार जीव ही बनाता है, मन जड़ है वह कुछ नहीं बनाता; जब तक "अपने तरीके से चाहिए" है तब तक आपका संसार रहेगा। उसका त्याग हो गया तो इस जगत में आओगे, शांति-संतोष रहेगा, फिर इस जगत से मुक्त होकर पिंड में आत्म दर्शन, और पिंड से मुक्त हुए तो काम खत्म।

**प्रश्न: गुरु जी, ऋषि-मुनि और सत्संग कहते हैं कि यह जग मिथ्या है, दुखालय है, मृत्युलोक है, यहां से जल्दी निकलो — तो क्या यह सही है? (P18-0188)**

आप एक बात सोचिए — अगर यहां दुख है तो ऋषि-मुनि और संत-महात्मा उसी जगत में आनंद में कैसे रहे? दुख जगत में नहीं, आपकी अपनी बनाई दुनिया में है। मन की जो परिभाषा यहां दी गई है — कि मन संसार नहीं बनाता, जीव ही अपने तरीके से चाहिए के कारण संसार बनाता है, मन तो इंगित करता है — वह स्पष्ट कर लो, कोई संशय मत छोड़ो। यह प्रत्यक्ष मार्ग है; यहां मैं विश्वास की बात भी नहीं करता, क्योंकि विश्वास का नाम देकर आपका इतना समय बर्बाद कर दिया गया। मुझ पर विश्वास ही मत करना — ज्ञान को समझो और आगे बढ़ो।

**प्रश्न: गुरु जी, आत्मा जिस घर, कुल, जगह में आई, वहां के दायित्व और संबंध तो प्राकृतिक मिले — फिर कहते हैं संसार हमने बनाया, यह कैसे? (P18-0189)**

बचपन में मेला देखने जाते थे तो माता-पिता अपनी क्षमता और आपकी मांग मिलाकर पैसा देते थे। अब मेले में जाकर आप चोरी करोगे, बेईमानी करोगे, ज्यादा खाओगे तो भरपाई आपको करनी पड़ेगी — आप घूमने आए थे और कामनाओं में फंस गए, तो गलती आपकी है। किसी ने आपको बेईमानी या गाली सिखाई क्या? जितना उपयोग के लिए मिला था उतना करते और घूम के निकल जाते; आपने कर्म के प्रति छल, कपट, चोरी, बेईमानी, चापलूसी, मक्कारी, धूर्तता, पाखंड कर दिया — इसमें आपका दोष है। विषय-विकारों को धारण करके अपने तरीके से बनाया हुआ यही आपका संसार है। जैसे जेल में बंद व्यक्ति के लिए बंद करने वाला जिम्मेदार नहीं, उसने कर्म किया तो दंड मिल रहा है — अब वह कहे "सारी व्यवस्था गलत है" तो वह सच नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, जब हम गलत करते हैं तो अंदर टीस क्यों उठती है? क्या अंतरात्मा रोकती है? (P18-0190)**

जब-जब आप गलत करने जाते हो, अंतरात्मा रोकती है — तुरंत अंदर से हिंट आता है "मत करो", और आप कहते हो "बच जाएंगे"। अगर यह टीस न होती तो सजा भी नहीं मिलती — पागल को या एक साल के अबोध बालक को कोई सजा नहीं, पर 20-40 साल का समझदार वही करे तो सजा मिलती है। आपने हर बार लालच और कामनाओं में आकर उसे दबाया है — जीवन जीने या पेट भरने के लिए नहीं, सोसाइटी मेंटेन करने के लिए: पकवान, एसी, लग्जरी कार, ब्रांडेड कपड़े चाहिए। जीवन जीने के लिए कोई भ्रष्ट नहीं होता; सोसाइटी आगे हो गई और जीवन पीछे। बचाने के आश्वासन देने वाले बैठे हैं — "यह उपाय कर लो, छूट जाओगे" — पर जिनके नाम से आश्वासन दे रहे वे खुद भोग के गए। अंतरात्मा ने मना किया फिर भी किया, तो करो तो भोगो।

**प्रश्न: गुरु जी, अध्यात्म में आगे बढ़ने की शुरुआत कहां से होती है? बरसों से अध्यात्म में लगे लोग पहले से ज्यादा अशांत क्यों हो जाते हैं? (P18-0191)**

अध्यात्म में आना है, आगे बढ़ना है, तो इसकी शुरुआत में ही चाबी है — ईमानदारी; उसी से ताला खुलेगा। अगर यह नहीं अपनाई तो जीवन भर बस शब्दों का ज्ञान रह जाएगा, एक कदम भी नहीं बढ़ोगे, गेट ही नहीं खुलेगा। बेईमानी से बंद हुआ, ईमानदारी से खुलेगा; जैसे ही ईमानदारी करने लगे, गेट खुल गया — अब अपनी सफाई करो। नहीं तो अध्यात्म के नाम पर शब्द जोड़ते रहोगे और जीवन और अशांत हो जाएगा। आज कई सालों से अध्यात्म में जाने वाले सोचते हैं पहले जीवन अच्छा था, अब और अशांत हो गए — क्योंकि उन्होंने ईमानदारी नहीं अपनाई, और उनके गुरु ने भी नहीं बताया; कहा "धीरे-धीरे छूट जाएगा, तू बस माल लाता रह"।

**प्रश्न: गुरु जी, लोग कहते हैं सब परमात्मा कर देंगे, कृपा कर देंगे — तो फिर हम अज्ञानी क्यों हैं? क्या परमात्मा किसी एक पर ही कृपा करता है? (P18-0192)**

परमात्मा अगर कर देता तो हम अज्ञानी क्यों होते? एक पहुंच रहा है, अनेक नहीं पहुंच रहे — तो क्या परमात्मा एक पर कृपा करेगा? फिर वह परमात्मा कैसा? परमात्मा वही है जो कुछ नहीं करता, लेनदेन से परे है; कर्ता में तो हम आ गए हैं। जिस पर कृपा हुई, उसने कुछ ऐसा किया कि कृपा हुई, तो मुझे भी वैसा ही करना पड़ेगा — मुझे तेरी नहीं, परमात्मा की कृपा चाहिए; कैसे हुई वह बताओ। आज गुरु-भक्त दोनों एक-दूसरे पर "कृपा" कर रहे हैं: भक्त ने व्यवस्था दे दी तो वह गुरु के लिए भगवान, गुरु ने "भगवान तुझमें है" बता दिया तो वह भक्त के लिए भगवान — दोनों को माल चाहिए, और तीसरे यानी असली भगवान का जीवन में कोई अता-पता नहीं।

**प्रश्न: गुरु जी, अभाव, कुभाव और स्वभाव वाले साधक कौन होते हैं और किस तरह के गुरु के पास जाते हैं? (P18-0193)**

जगत में तीन तरह के साधक निकलते हैं — अभाव, कुभाव, स्वभाव। स्वभाव वाला खोजी है, उसे आप नहीं रोक सकते; उसे कुछ नहीं चाहिए, वह किसी के जाल में नहीं फंसेगा। अभाव और कुभाव वाले रास्ते में व्यवस्था और सिंहासन मिल जाए तो रुक जाते हैं। अभाव वाले के पास राजसी गुरु, कुभाव वाला (बुरे काम करने वाला) तंत्र मार्ग वाले के पास, और स्वभाव वाले के पास सात्विक आते हैं — सात्विक के पास भीड़ नहीं होती, संख्या बहुत कम होती है; राजसी-तामसी वहां रुक नहीं पाता क्योंकि उसके अहंकार और बैकग्राउंड को पोषण नहीं मिलता, घुटन होती है। अभाव-कुभाव वालों के यहां वीवीआईपी, वीआईपी और सामान्य — तीन व्यवस्थाएं; करोड़पति आए तो दो बजे गेट खुल जाता है, गरीब को "बाद में आना"। स्वभाव वाले के पास सबको एक जैसा बैठना पड़ता है — करोड़पति के बगल में कमजोर, एक जैसा भोजन, एक जैसा बर्ताव।

**प्रश्न: गुरु जी, राजसी-तामसी लोग जो खुशी अनुभव करते हैं (गाड़ी, मोबाइल, बंगला लेकर), वह किसे होती है — आत्मा को या जीव को? जीव और आत्मा दो हैं या एक? (P18-0194)**

वस्तुओं से जो खुशी की अनुभूति होती है, वह जीव कर रहा है; आत्मा को ना दुख है ना सुख। जीव और आत्मा एक ही हैं — जैसे पानी और बर्फ एक ही हैं; जब भी टूटेगा बर्फ टूटेगा, पानी नहीं टूट सकता, मिटेगा भी बर्फ ही। जब जीव अपने स्वभाव में, मूल में जाएगा तो समता भाव आ जाएगा, आनंद ही आनंद, और फिर परमानंद की यात्रा। जैसे बाहर से घर लौटने पर सुकून मिलता है, वैसा ही। और वह तभी प्राप्त होगा जब जितना प्राप्त किया है उसमें से राग-द्वेष निकल जाए — वस्तु नहीं छोड़नी, उसमें जो राग-द्वेष पाल रखे हैं वह छोड़ना है।

**प्रश्न: गुरु जी, कृपया आप सत्संग किसी फिक्स टाइम पर किया करें, ताकि पूछने वाले पूछ सकें — यह क्यों नहीं होता? (P18-0195)**

फिक्स टाइम बन ही नहीं पाता। अगर 8 बजे का समय तय करूं और 7 बजे परमात्मा ने किसी और को भेज दिया तो उसे कैसे हटाऊं? आने वाले बिना बताए आ जाते हैं। फिक्स न करना भी एक नियम ही है — सभी के लिए एक ही नियम: जो भी आएगा, सत्संग होगा; जब लाइव आना होता है आ जाते हैं। कोई कहेगा 10 बजे ड्यूटी से आता हूं तब सुनाओ, कोई और समय मांगेगा — ऐसे कैसे होगा? आप अपने को फिक्स करो कि जिस समय आता है, उस समय सुन लो। व्यक्तिगत कोई दायरा होता तो टाइम भी देते; यह परमात्मा का कार्य है, वह जाने — मैं वर्तमान में जीता हूं, जब समय मिला कर दिया।

**प्रश्न: गुरु जी, आपने ज्ञान बांटने का यह प्रण कब और क्यों लिया कि हर जगह, हर किसी को ज्ञान देंगे? (P18-0196)**

ज्ञान के पहले मैं अनेक गुरुओं के पास गया, उनके पास जा-जाकर रोता था, गिड़गिड़ाता था कि मुझे मार्ग बताओ, पर ज्यादातर जगह डांट मिलती थी — उस लेवल पर बैठे गुरु सीधी बात तक नहीं करते। जूनागढ़ में दत्तात्रेय मंदिर में (ऊपर सीढ़ियां चढ़कर) मना होने पर भी प्रतिमा छू ली — डांट पड़ी, मैंने कहा जो दंड हो दो, पवित्र को छूने का भाव था। आश्रमों में देखता था कि ये लोग मात्र पैसों के लिए आत्माओं को भटका रहे हैं, तो रोता था। तभी भाव बनाया कि मुझे घुमा-फिराकर नहीं, प्रत्यक्ष मार्ग चाहिए, और जिस दिन आत्मज्ञान हुआ उस दिन गली-मोहल्ले, रोड पर, गटर के पास, शौचालय के सामने भी ज्ञान दूंगा। मुझे आनंद नहीं चाहिए — लाखों-करोड़ों लोगों को उपलब्धि हो, तब इस ज्ञान के मिलने का मतलब है। इसलिए सुबह से रात दो-दो बजे, कभी अगली सुबह तक सत्संग करता हूं; शरीर साथ न दे तो भी उसका उपयोग करता हूं — एक-एक शब्द के लिए मैं तरसा था, आज वे मेरे काम के नहीं, आपके काम के हैं।

**प्रश्न: गुरु जी, जब आपके पास लोग कम आते थे तो क्या आपने सोचा कि ज्ञान देने के लिए आवरण (वेश-भूषा) का सहारा लेना पड़ेगा? आपको इसका जवाब कैसे मिला? (P18-0197)**

मैं बहुत चिंतित था कि क्या मुझे भी आवरण का सहारा लेकर ज्ञान देना पड़ेगा, क्योंकि मेरे फटे-चिथड़े कपड़ों के कारण मुझसे जल्दी कोई बात नहीं करता था। एक दिन अदलपुरा में मंदिर के पास बैठा था, एक परिक्रमावासी युवक आया, अंदर ध्यान में बैठा और कुछ देर बाद आकर मेरे पैर पकड़ लिए — बोला ध्यान में किसी ने कहा "वहां जाओ, तुम्हें मार्ग मिल जाएगा"। वह पुणे का इंजीनियर था, आत्म साक्षात्कार के लिए निकला था; मैंने पूछा "कौन किसका आत्म साक्षात्कार करना चाहता है?" और उसके प्रश्नों के उत्तर दिए। उसी समय मुझे जवाब मिल गया — तुम्हें कुछ बदलने की, कपड़े या आवरण की जरूरत नहीं; जो मिला है वह बांटो, जिसको ज्ञान दिलवाना होगा मैं भेज दूंगा। उस दिन से कोई आवरण का टेंशन नहीं। यहां जितनी व्यवस्था है उसी के आदेश से है, सात्विक है और सबके लिए एक समान — एक टाइम भोजन है तो मैं भी एक ही टाइम करता हूं, जो आप बनाकर खाते हो वही मैं भी।

**प्रश्न: गुरु जी, गुस्सा बहुत आता है, इसको कैसे कम करूं? (P18-0198)**

गुस्सा तभी आता है जब सामने वाला हमारे तरीके से बर्ताव नहीं करता, जैसा मैं चाहता हूं वैसा नहीं करता। अपने तरीके से क्यों चाहते हो? जिसका जैसा स्वभाव है, वह वैसा ही बर्ताव करेगा; नहीं पसंद है तो उसका त्याग कर दो — सीधा-सीधा। अपने तरीके का त्याग कर दो, गुस्सा आएगा ही नहीं; करना भी चाहोगे तो भी नहीं आएगा।

**प्रश्न: गुरु जी, सब संतों ने कहा है कि शब्द, कलमा, नाद, वाणी, नाम से ही सब कुछ पैदा हुआ और वही शब्द/नाम हमारे अंदर भी है, जिसकी धुन सुनाई देती है — इसे समझाएं। (P18-0199)**

अंदर आत्मा है, शब्द नहीं। शब्द टकराहट से निकलता है; आत्मा शब्द, दृश्य, गंध, रस, स्पर्श से परे है, तो वहां शब्द कैसे प्रकट होगा? शब्द तो जगत में प्रकट होंगे। आत्मा की कोई धुन नहीं — धुन दो से होती है, एक में धुन पैदा ही नहीं हो सकती; एक उंगली से धुन पैदा करो, होगी तो हवा की टकराहट से। आत्मा का कोई रूप नहीं, वह रूप से परे है। धुन परमात्मा नहीं है; धुन पकड़ ली तो भी जगत में ही फंसे — फिर धुन अलग, मैं अलग, परमात्मा अलग — तीन हो गए। अगर एक ही है, तो सुनने वाला कौन? नाम लेकर क्या करेंगे — नाम के पीछे जो है वहां जाना है; धुन नहीं, जहां से धुन निकल रही है वहां जाना है। सीधी बात — "कुछ नहीं" में आ जाओ, तब परमानंद की यात्रा होगी।

**प्रश्न: गुरु जी, संत-महात्माओं की वाणियों में परमात्मा की महिमा गाई गई है, बाइबल कहती है "इन द बिगिनिंग वाज द वर्ड" — क्या किसी ने बताया कि परमात्मा कैसा है? (P18-0200)**

आज तक परमात्मा कैसा है, यह कोई नहीं बता पाया। सबने महिमा गाई और यह बताया कि वहां तक कैसे पहुंचो। गुरु नानक देव जी ने "एक ओंकार सतनाम" लिखा — यह बताया कि ओंकार के पीछे एक ही वह सत है, यह नहीं बताया कि वह कैसा है; वह बुद्धि के काबू में नहीं। अभी तक सब यही सुन पाए कि वह बहुत बड़ा है, अनंत है, विराट है। जो शब्द से परे है, उसके बारे में शब्दों में कैसे बोला जाएगा? अब तक जितने लोगों ने कहा, बस एक ही बात कही — निर्विकार हो जाओ, आत्म दर्शन करो। ज्यादातर लोग बताएंगे "मन रोको, प्याज-लहसुन मत खाओ, निर्विचार हो जाओ" — निर्विचार कभी हुआ ही नहीं जा सकता; निर्विकार होना है।